क्यों मुस्कुराए बुद्ध

2500 वर्ष बाद

आबिद सुरती

नेहरू बाल पुस्तकालय

क्यों मुस्कुराए बुद्ध

2500 वर्ष बाद

आबिद सुरती

छाया चित्र

सर्वेश

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

अली दिन भर टेलीविजन देखता। देखता कि कितना सुंदर है हमारा देश! इतनी सारी भाषाएं, संस्कृतियां, शहर, गांव, नदी, पहाड़ ...। सफेद संगमरमर का बना प्रेम का सबसे सुंदर प्रतीक ताजमहल, शहंशाहों का शहर दिल्ली, जलते घाटों की नगरी वाराणसी, मदर टेरेसा का महानगर कोलकाता, फिल्मी चकाचौंध वाला मुंबई ... "क्या मैं यह सब खुद नहीं देख सकता?" अली ने खुद से सवाल किया।
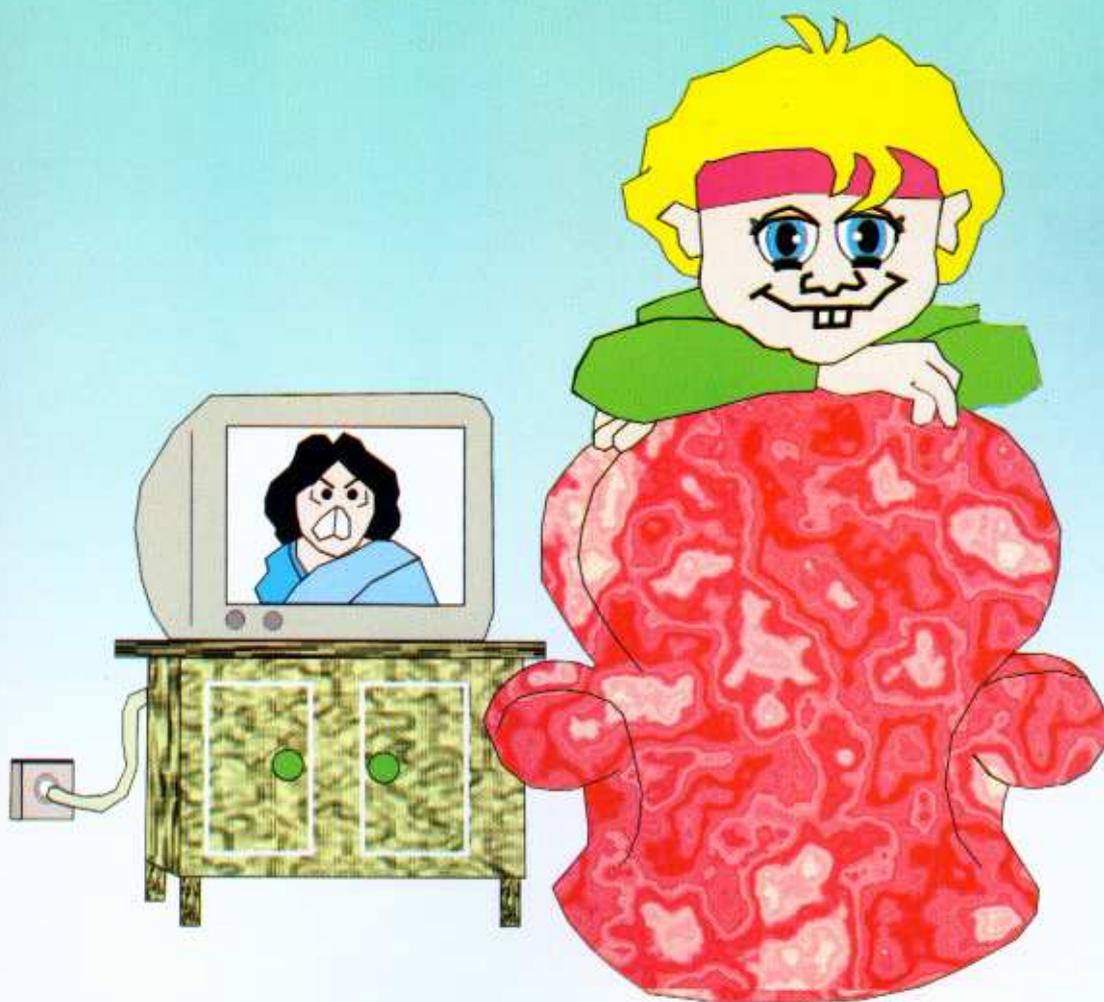
"मैं खुद देखने जाऊंगा यह सब!" अली ने मन ही मन दृढ़ निश्चय किया। लेकिन यह क्या? उसके अंग-अंग उसी के विरोध में खड़े हो गए।

"हमें अपने साथ शामिल मत करना! तुम तो गांव-गांव भटकोगे, मेरी खटिया खड़ी कर दोगे चल-चल कर।" पैरों ने पांव पटक कर कहा।

हाथों ने हड़ताल की धमकी दे दी, "अगर हम चले तो सामान उठाना पड़ेगा, बस में, ट्रेन में हम ही को लटकना पड़ेगा। हमें क्या मजा आएगा? हम तो नहीं जा रहे तुम्हारे साथ।"

कान भी कतराए, "शहर में रहते-रहते हमें तो आदत हो गई है चिल्ल-पों सुनने की। तुम्हें जाना है गांव में , जंगल में। हम नहीं रह सकते ऐसे सन्नाटे में। अली मियां, तुम ही जा कर सुनो झरनों की कल-कल, चिड़ियों की चह-चह। हमें अपने हाल पर छोड़ दो।"

"ऐ भाई, तुम्हें तो घाट-घाट का पानी पीना है, जगह-जगह के स्वाद लेना है। कभी सोचा है कि मेरा क्या होगा?" पेट गुड़गुड़ाया। "पूरी आफत मुझ पर ही आएगी ---- ना -- ना -- कतई नहीं -- मैं तो नहीं जा सकता तुम्हारे साथ।"

अब अली ने ही आंखों से पूछ लिया, "अब तुम्हारा क्या खयाल है, मेरे नन्हे-मुन्ने तारों?"

आंखें मटकीं, "यह बात तो सही है कि तुम तो देश-दुनिया का आनंद लोगे। पर्वत-नदी देखोगे, किलों, मंदिरों का लुत्फ उठाओगे। हमें इसके लिए पूरे समय काम करना पड़ेगा। फिर भी हम तुम्हारे साथ --?"

"तो क्या तुम भी --?" अली घबरा गया।

"नहीं-नहीं थोड़ा कष्ट तो होगा। फिर भी हम तुम्हारे साथ चलेंगे।" दाईं आंख ने जवाब दिया।

"ऐ -- ऐ -- ये क्या बात हुई? तुम अपना तो निर्णय ले सकती हो। लेकिन मेरी तरफ से फैसला करने का हक तो मैंने तुम्हें दिया नहीं है।" बाईं आंख को गुस्सा आ गया। "मुझे कहीं नहीं जाना। मैं तो यहीं रहूंगी। घर के भीतर ठंडक में। तुम्ही जाओ बाहर चिलचिलाती धूप में।"
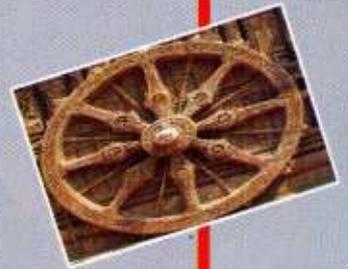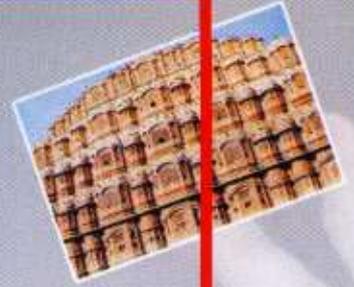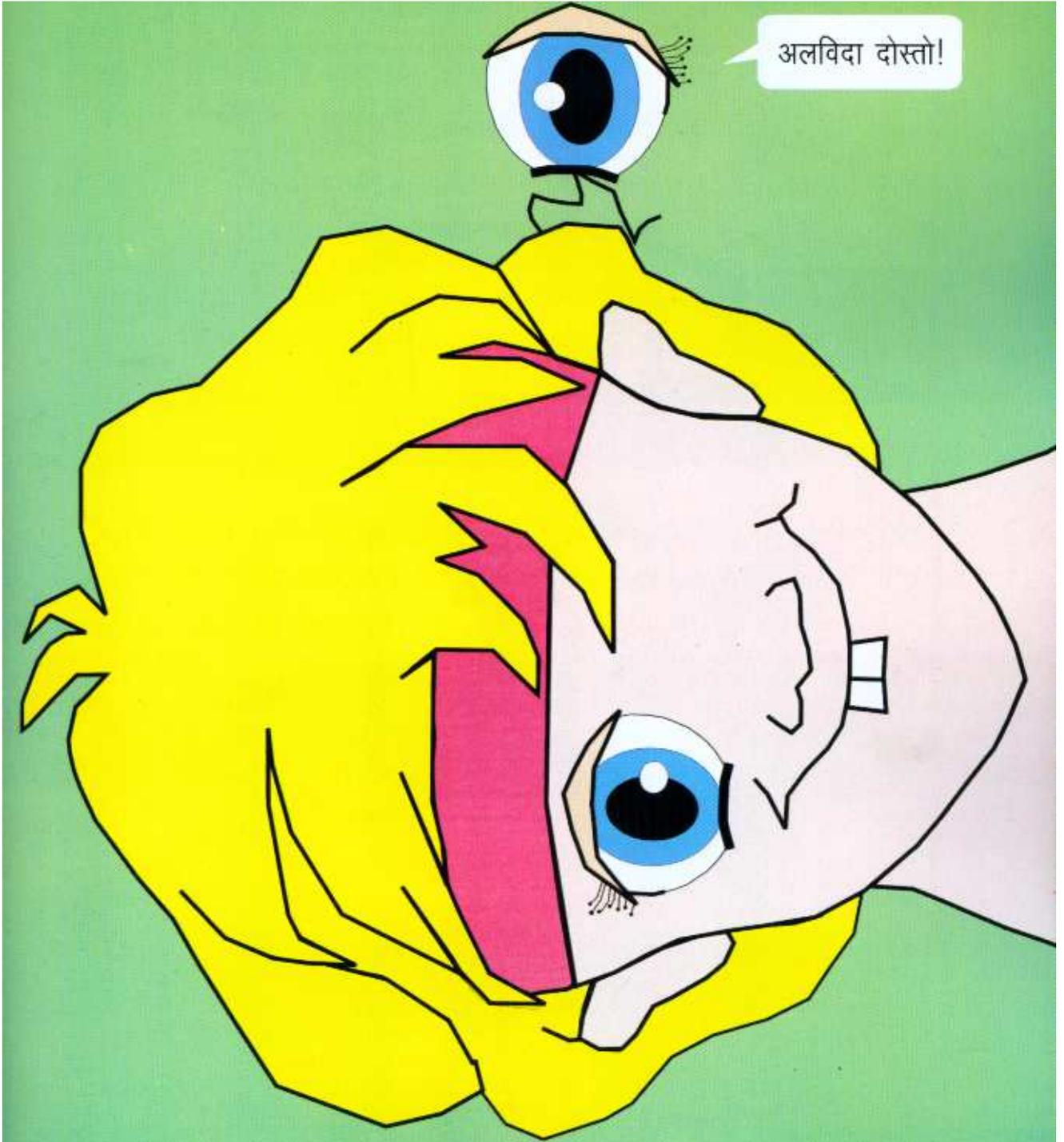
अब अकेली दाईं आंख रह गई। उसने अकेले ही जाने का फैसला कर लिया। छोटी सी तो थी ही -- सफर में कोई दिक्कत नहीं! दिल्ली जाने वाले किसी भी सूटकेस में या आगरा जाने वाली किसी भी मोटर साईकल पर चुपके से सवार हो सकती थी। लेकिन उसने चुनी एक कार। दिल्ली तक ले गई कार! रास्ते के दृश्य देख कर तो आंख की आंखें खुली की खुली रह गईं।

हे राम
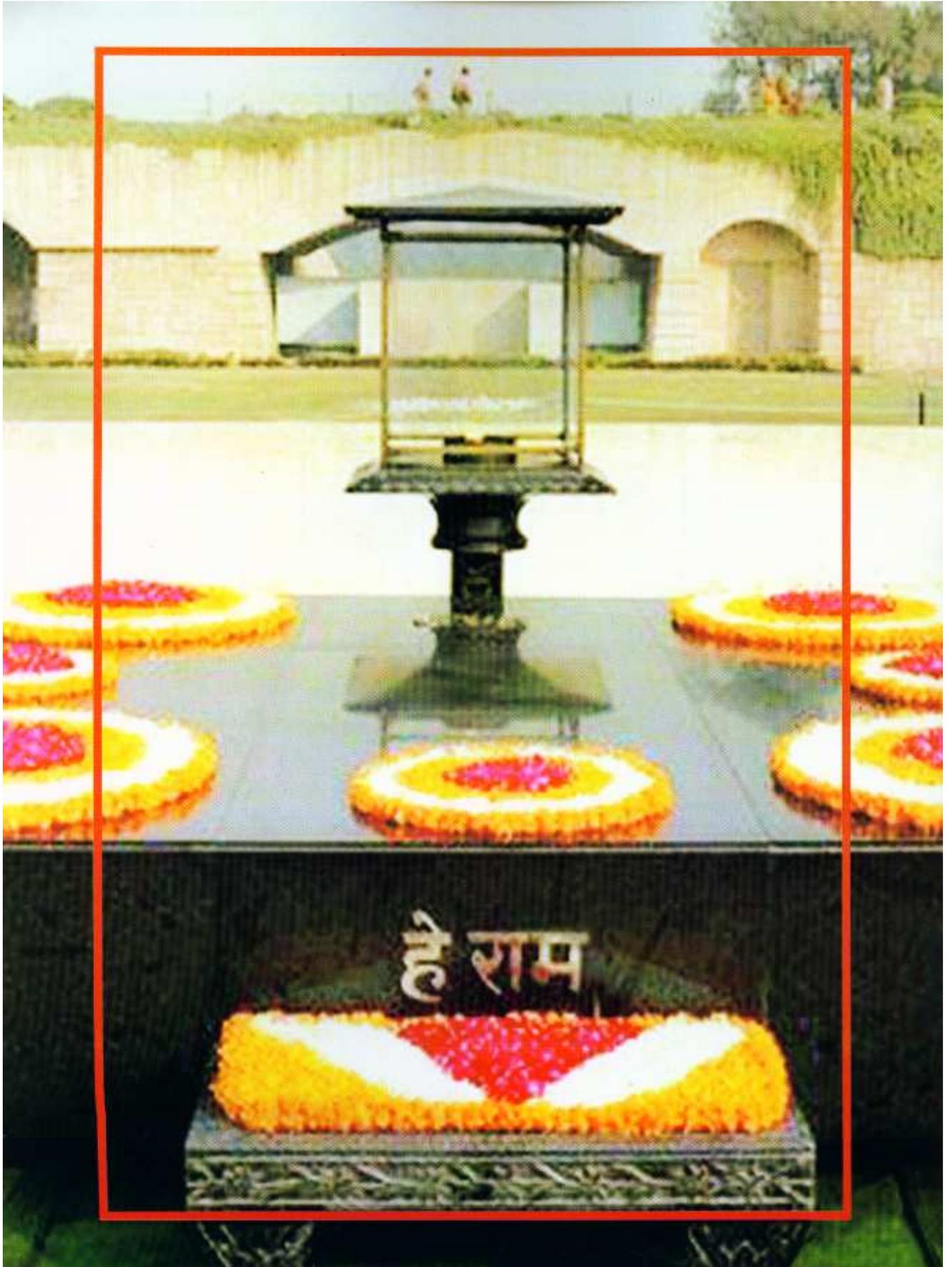
आंख चकित थी कि वह दिल्ली पहुंच चुकी है। उसके सामने थी बापू की समाधि — राजघाट। दूर तक फैली हरियाली और गुटर गूं करते सफेद कबूतर!

"भारत दर्शन की इससे अच्छी शुरुआत और क्या होती?" राष्ट्रपिता को श्रद्धांजली देते हुए आंख बज उठी।

"बिल्कुल सच!" पीछे से आवाज आई। आंख ने पीछे मुड़ कर देखा। अपने जैसी ही एक आंख को देख कर खुशी का ठिकाना नहीं रहा।

"हेलो"— दाईं आंख ने मुस्कुरा कर कहा।

"हाय" नई आंख भी खुश थी। "मेरी तरह तुम भी अकेले हो?"

"क्योंकि बेचारा अली लाचार था।" कबूतरों को उड़ कर गुंबद पर बैठते देख आंख ने जवाब दिया। "बगैर कान, हाथ, पैर वह कैसे आता? इसलिए मैंने अकेले ही निकलने का फैसला किया था। और तुम? तुम कैसे?"

"मेरी भी यही कहानी है। मेरे जस्सी के साथ भी कोई आने को राजी नहीं था।" नई आंख ने दाईं के हाथों में हाथ देते हुए कहा।
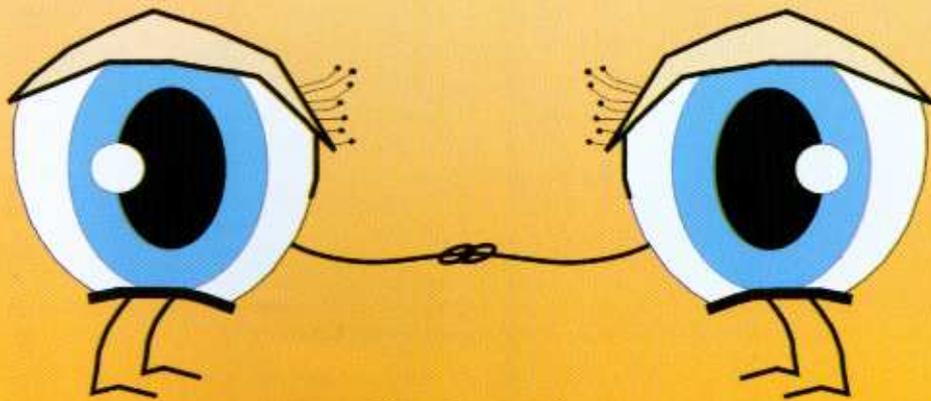
दोनों आंखें आपस में अच्छी दोस्त बन गईं। अब भारत भ्रमण के लिए वे अकेली नहीं थीं। दोनों दिल्ली की सड़कों पर थीं — तेज दौड़ती कारों और सड़कों पर भारी भीड़ वाली दिल्ली! लेकिन यह सुकून है कि यहां हरियाले मैदान बहुत से हैं। इनके बीच फुदकती गिलहरी और कांव-कांव करते कौए भी खूब दिख जाते हैं।
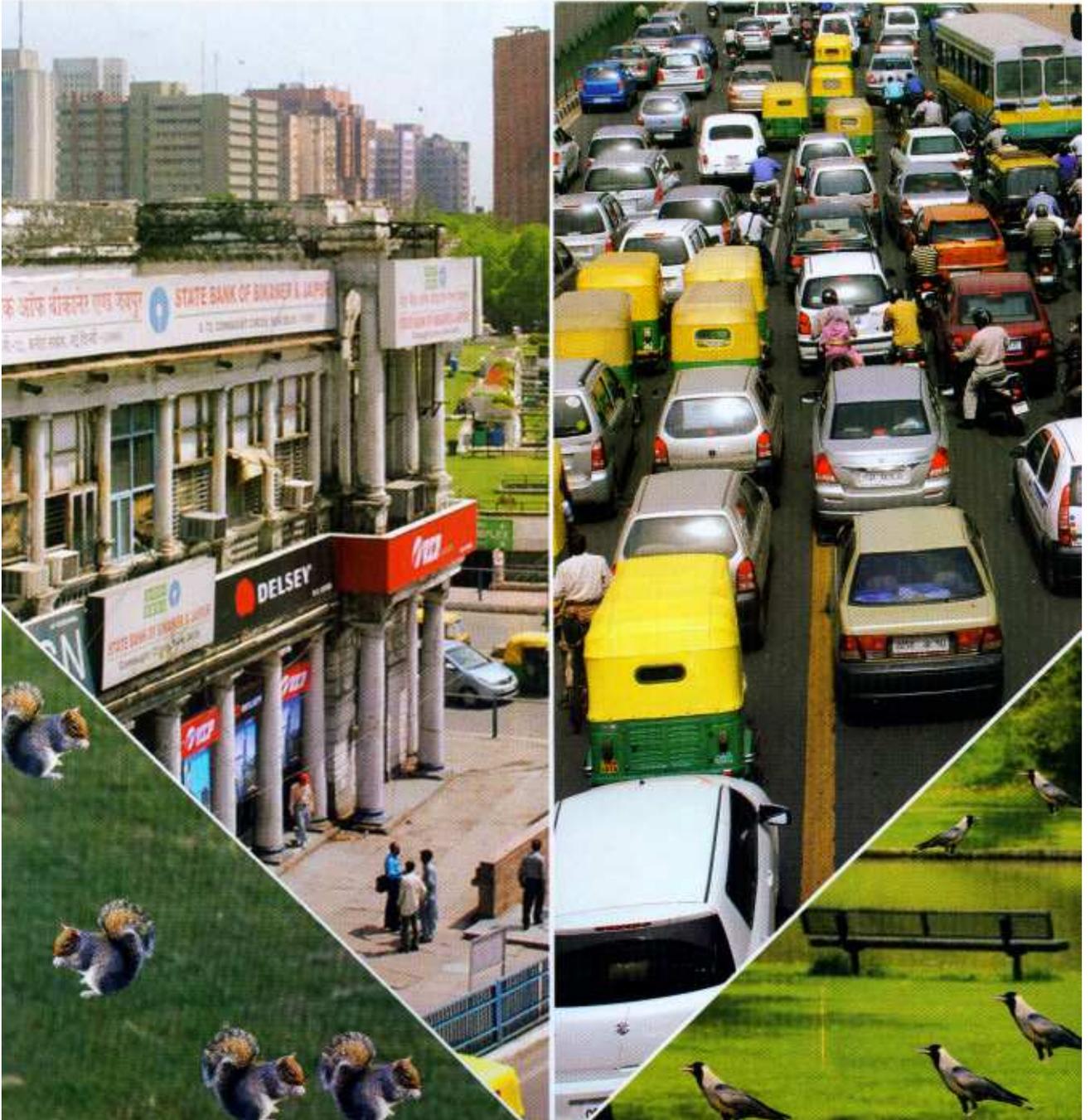
दोनों सहेलियां इस समय राजघाट को पार कर पुरानी दिल्ली पहुंच गई थीं। लाल किला! लाल पत्थरों से बना विशाल किला।
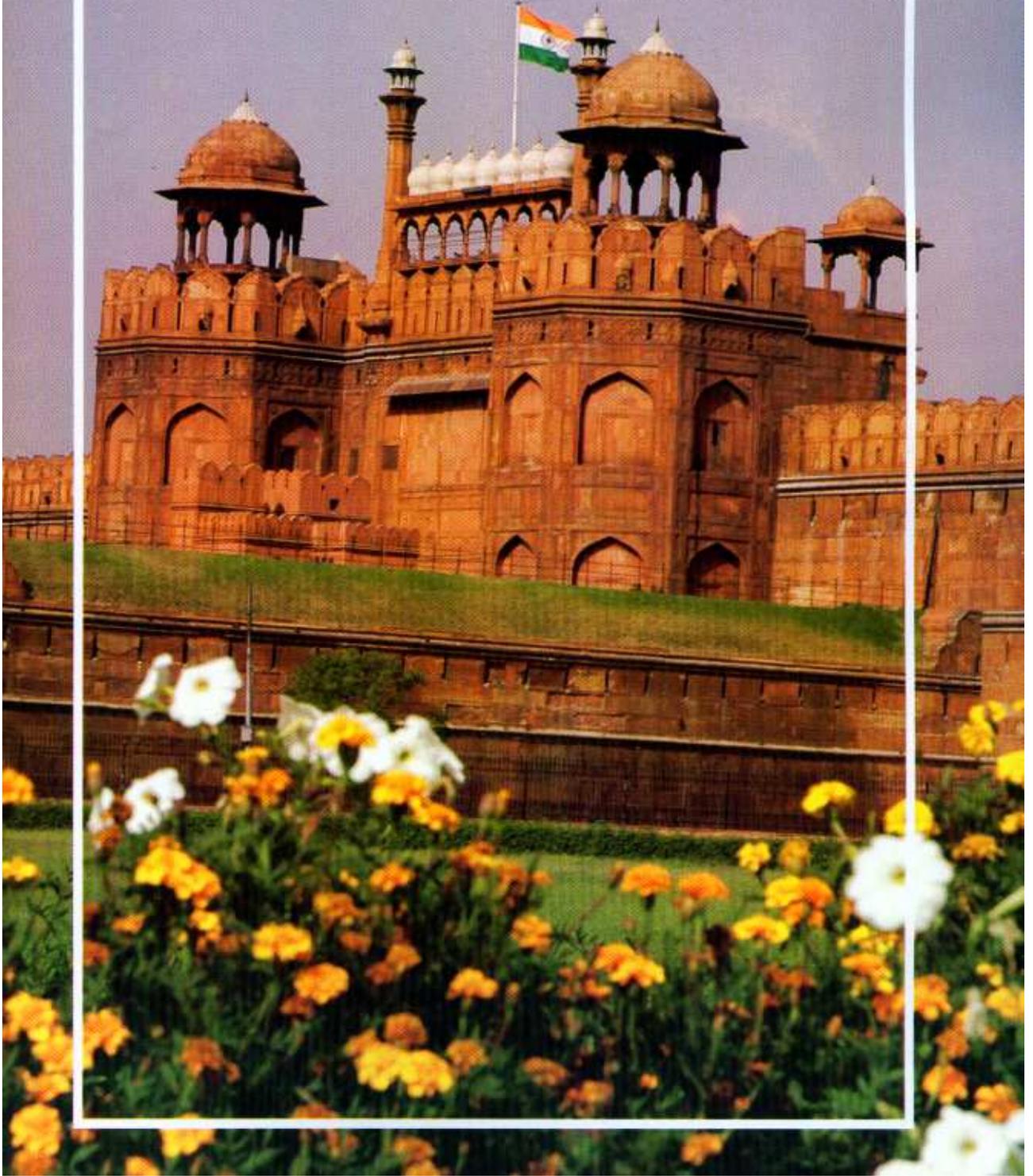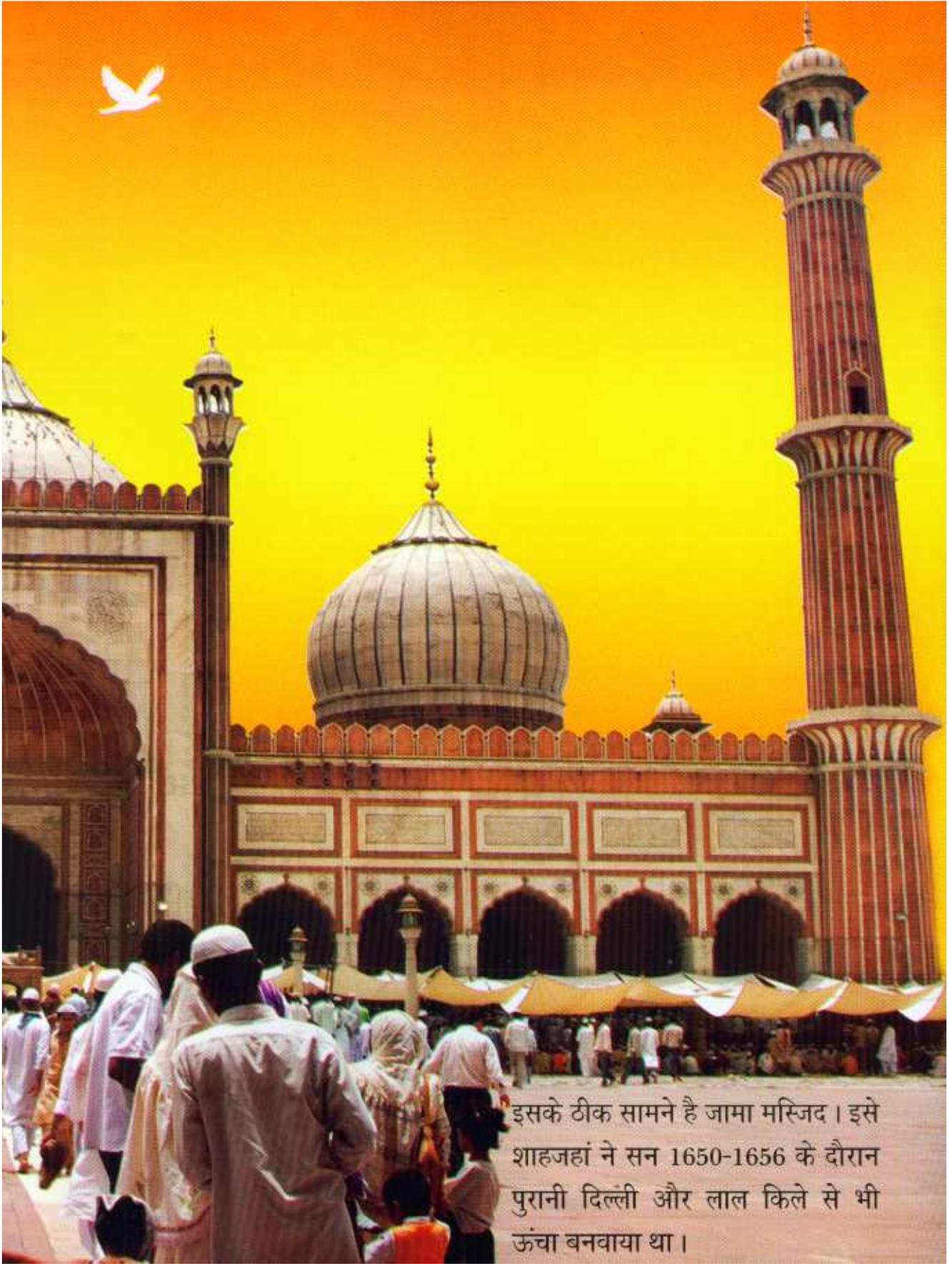
इसके ठीक सामने है जामा मस्जिद। इसे शाहजहां ने सन 1650-1656 के दौरान पुरानी दिल्ली और लाल किले से भी ऊंचा बनवाया था।
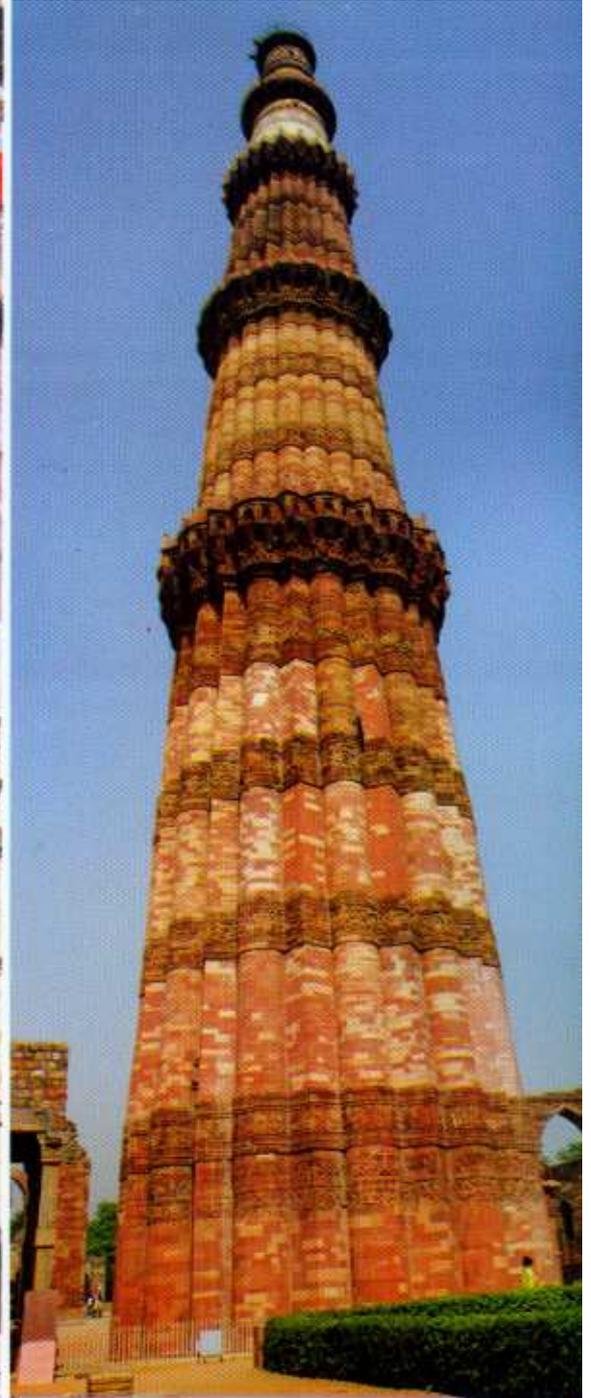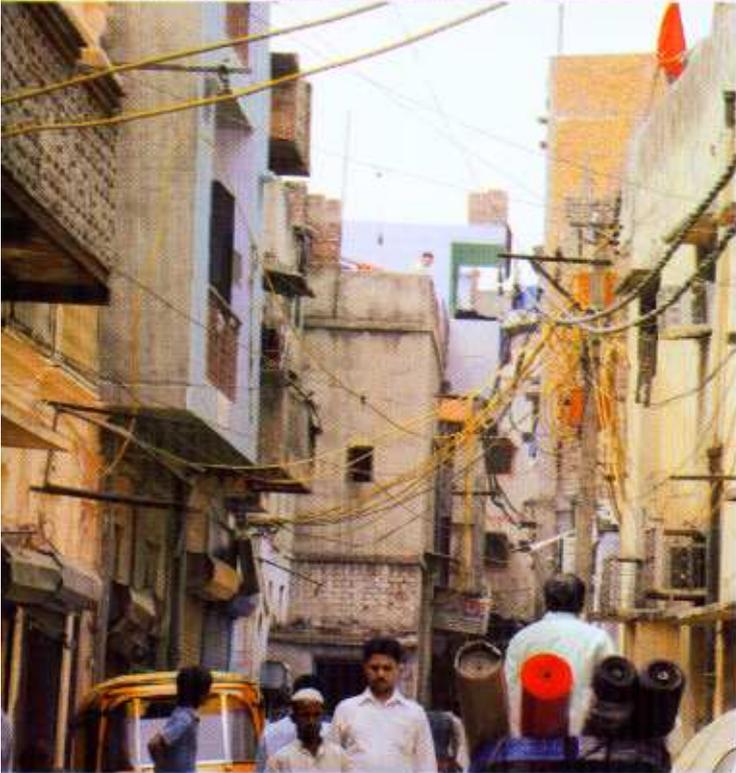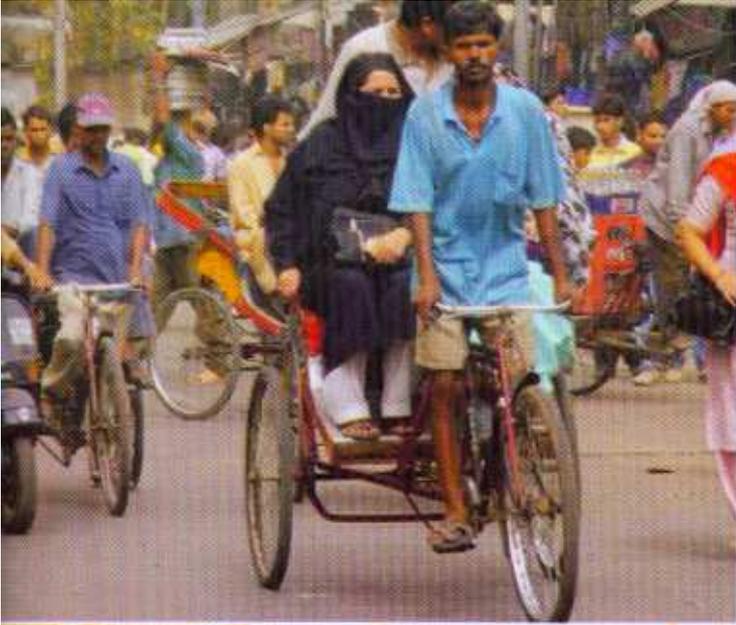
चांदनी चौक, जहां मनुष्य और मशीन साथ-साथ चलते हैं। जहां कबूतरों और कटी पतंगों ने बिजली व टेलीफोन के तारों और ऐतिहासिक इमारतों के गुंबदों पर डेरा डाल रखा है ----। यह है बादलों से बात करता कुतुब, जो अतीत का एक अद्‌भुत और रहस्यमयी मीनार है।

यहां से वे चल दिए आगरा ! रेल में सवार हो कर !!
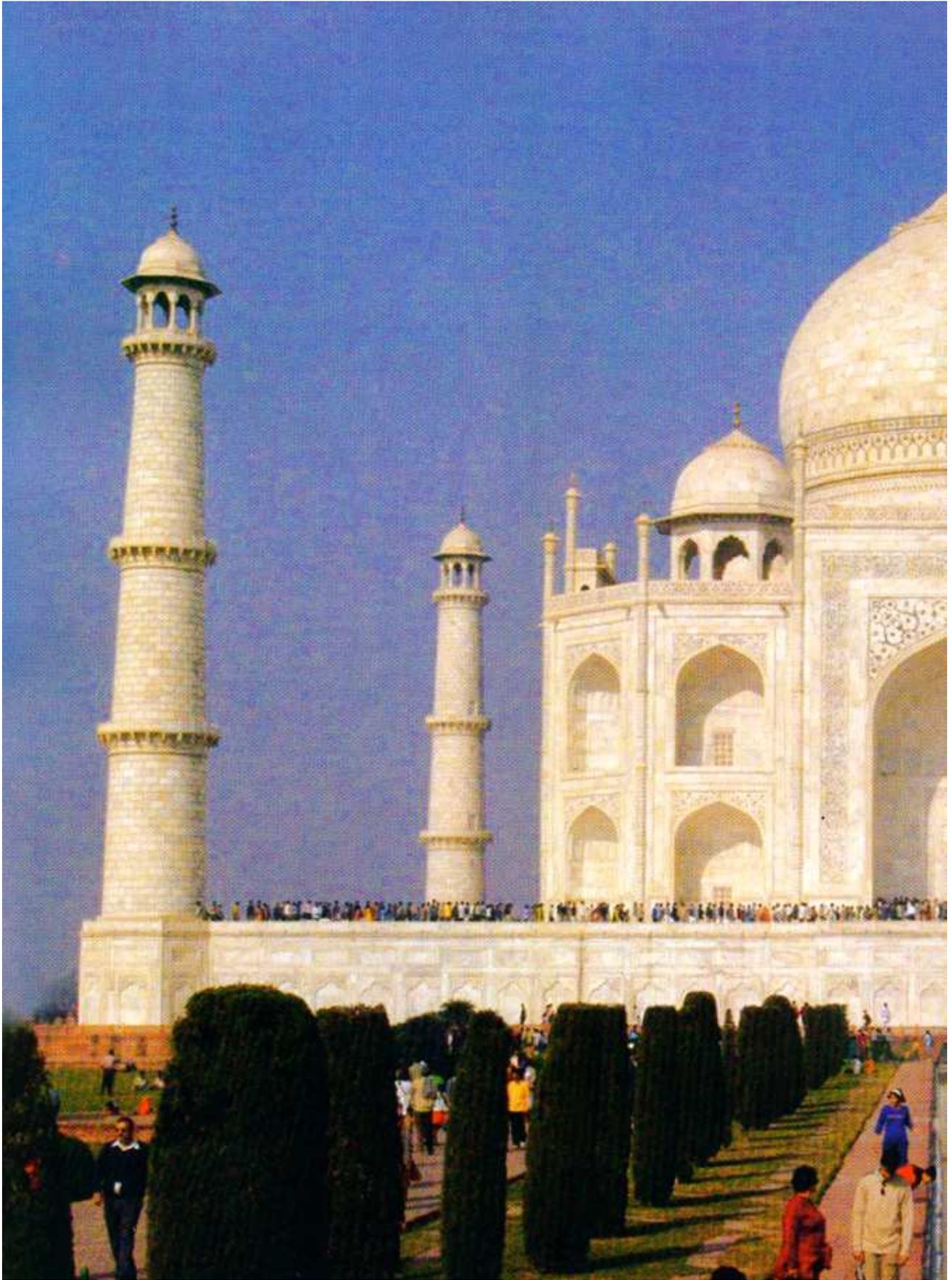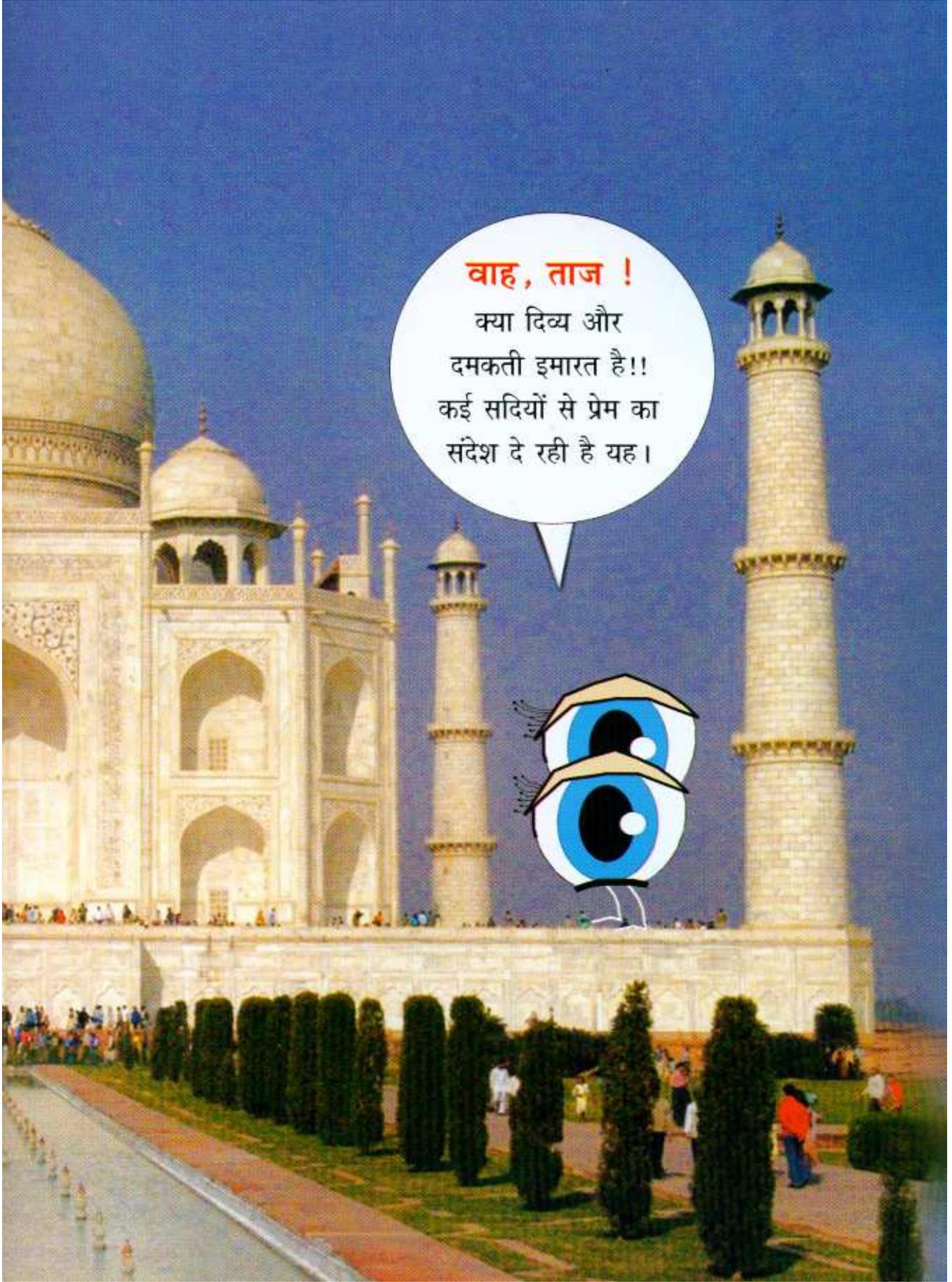
वाह, ताज !
क्या दिव्य और
दमकती इमारत है!!
कई सदियों से प्रेम का
संदेश दे रही है यह।
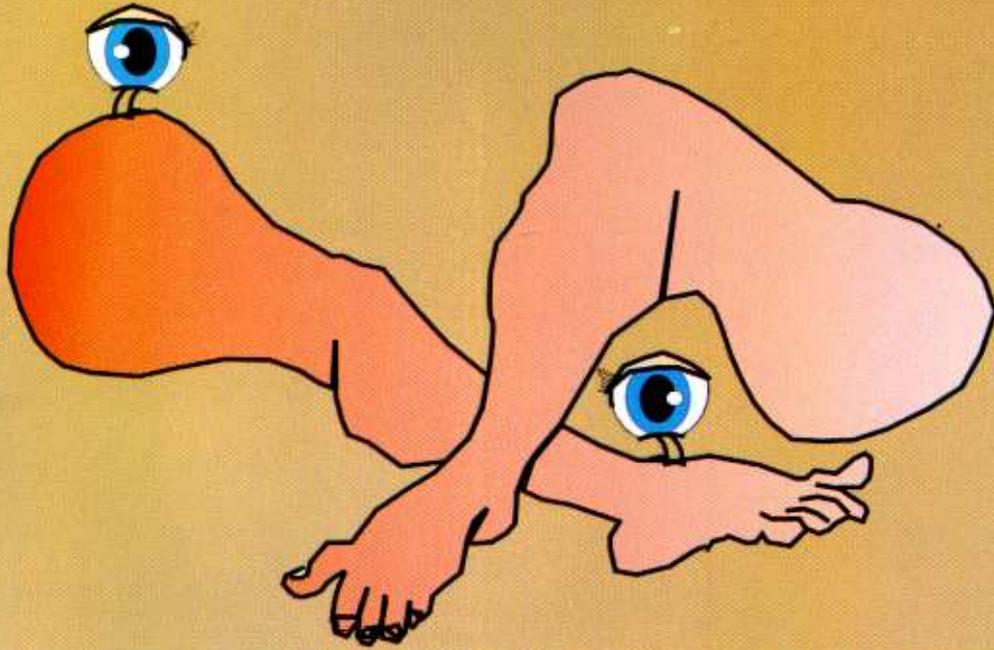
"इसे चांदनी रात में देखना ना भुलाया जाने वाला अनुभव होता है।" ताजमहल को निहार रहे एक पैर ने लंबी सांस भर कर कहा, "ऐसा लगता है जैसे सारा वातावरण परियों की किसी कहानी का एक पन्ना हो। उजला-उजला, दूध में नहाया हुआ!"

सात अजूबों में से एक ताजमहल के बारे में ऐसी ही कई बातें सुन कर दोनों आंखें खुली की खुली रह गईं।

आखिरकार एक आंख ने पैर की ओर दोस्ती का कदम बढ़ाया, "मैं, अली की दाईं आंख हूं।"

"और मैं हूं जस्सी की बाईं आंख।" दूसरी आंख कहां पीछे रहने वाली थी।

"आप दोनों से मिल कर बहुत खुशी हुई। हम हैं हैनरी के पैर।" पैर ने अपने साथी का भी परिचय दिया।

जल्दी ही चारों की पक्की दोस्ती हो गई। पैरों को आंखें मिलीं और वे पैदल ही बनारस की ओर चल दिए। वे चाहते थे वन और वादियों में रंग-बिरंगे फूलों को खुद छूना! पहाड़ों और घाटियों की सैर करना!! दूब की चादर पर पसर कर तारों को निहारना!!!

रास्ते में उन्हें इलाहबाद मिल गया— तीन पवित्र नदियों का संगम। चारों ने वहीं रात बिताई।
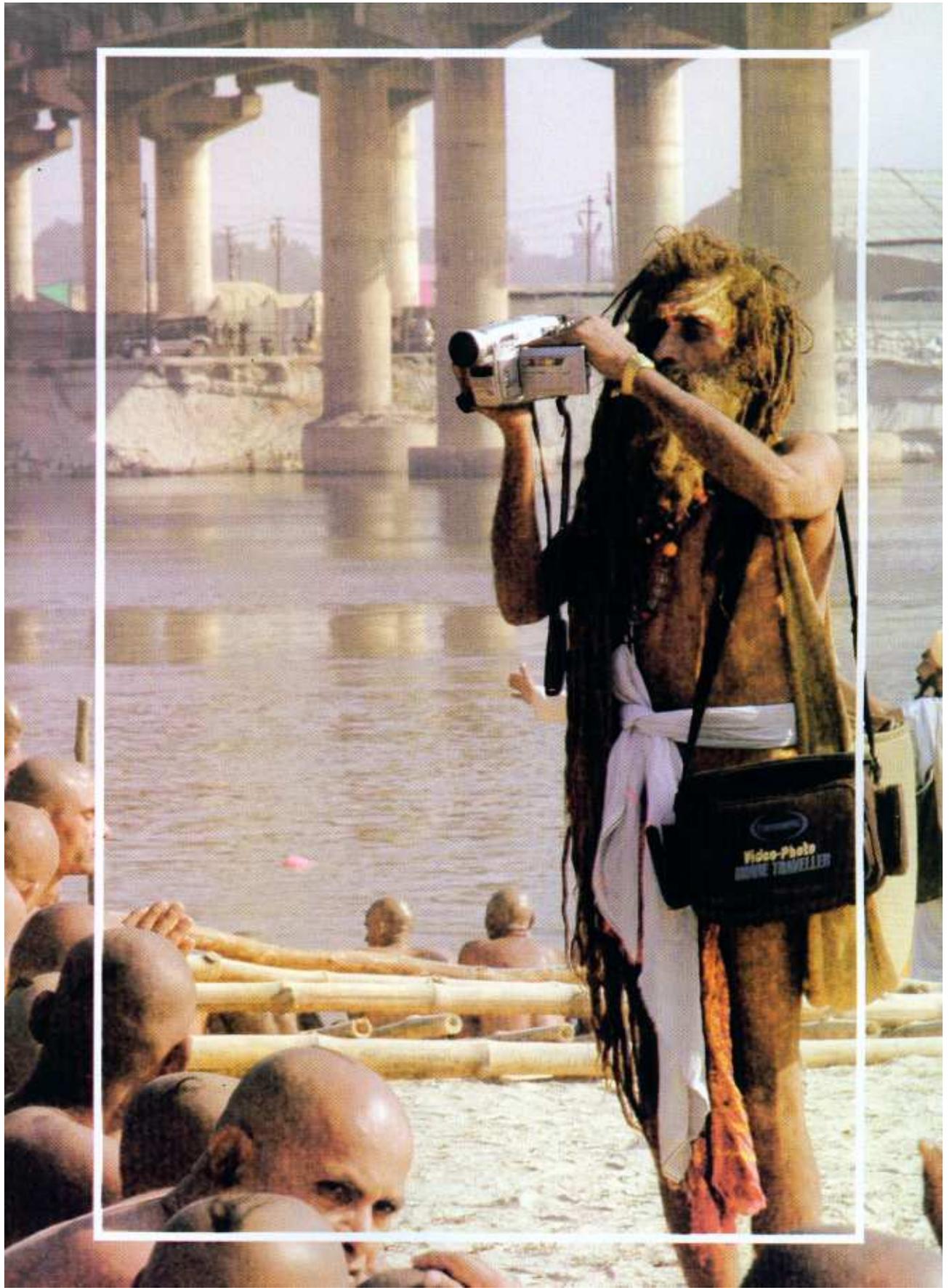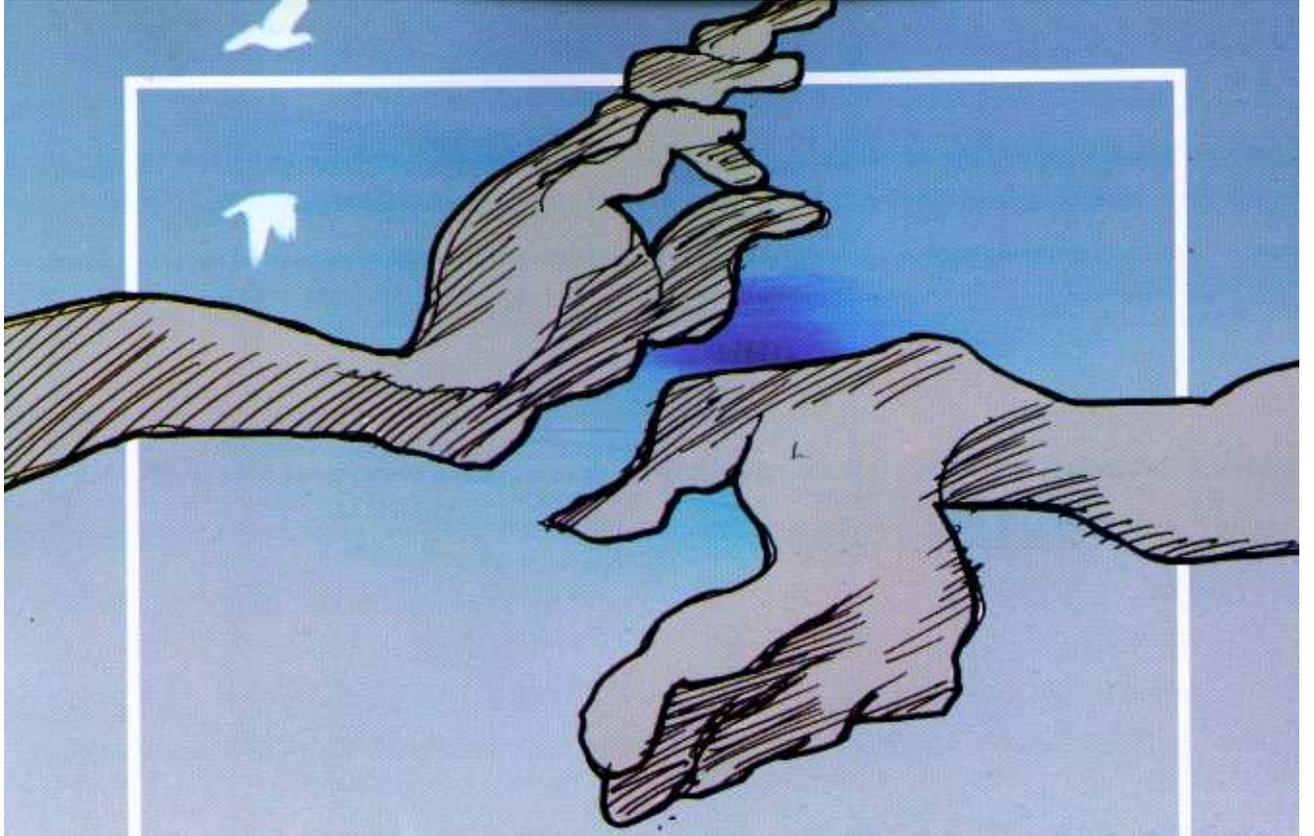
ठंड लग रही थी। चारों ने मिल कर कुछ लकड़ियां जोड़ीं और अलाव जला लिया। "क्या हम भी कुछ देर इस आग को ताप सकते हैं?" पीछे से आई एक आवाज ने चारों को चौंका दिया। पीछे मुड़ कर देखा तो कालीकट के मुत्थू के दो हाथ भरतनाट्यम की अलग-अलग मुद्राओं में मचल रहे थे।

यह नजारा देखने में वे इतने मशगूल हो गए कि नए मेहमानों की आवभगत करना भी भूल गए। दाईं आंख को इस भूल का एहसास हुआ, "आप दोनों का स्वागत है। आईए, आप भी आग ताप लें।"

"अरे, इनकी मुद्राएं देख कर तो मेरा मन भी नाचने के लिए मचल रहा है।" बाईं आंख फड़फड़ाई।

"हमारा भी!" दोनों पर ठुमकने लगे।

और फिर सुबह होने तक उत्सव चलता रहा। सभी मिल कर त्रिवेणी संगम की रेती पर खूब नाचे।

सूरज की पहली किरण के साथ ही वे खुसरो पार्क और आनंद भवन पहुंच गए। चाचा नेहरू का पुश्तैनी घर है यह। आजादी की लड़ाई की कई महत्वपूर्ण घटनाओं का साक्षी - आनंद भवन!

अब पूरा समूह एक नाव में सवार हो गया। सूरज भी देख रहा था एक नए इंसान का निर्माण। यह मनुष्य ना तो हिंदू है और ना ही मुसलमान ना सिख,ना ईसाई। यह मनुष्य एक भारतीय था, एक सच्चा भारतीय। हालांकि आधा-अधूरा था, फिर भी उनमें एक लय थी, समरसता थी। उसके शरीर के सारे हिस्से एक दूसरे के पूरक थे।
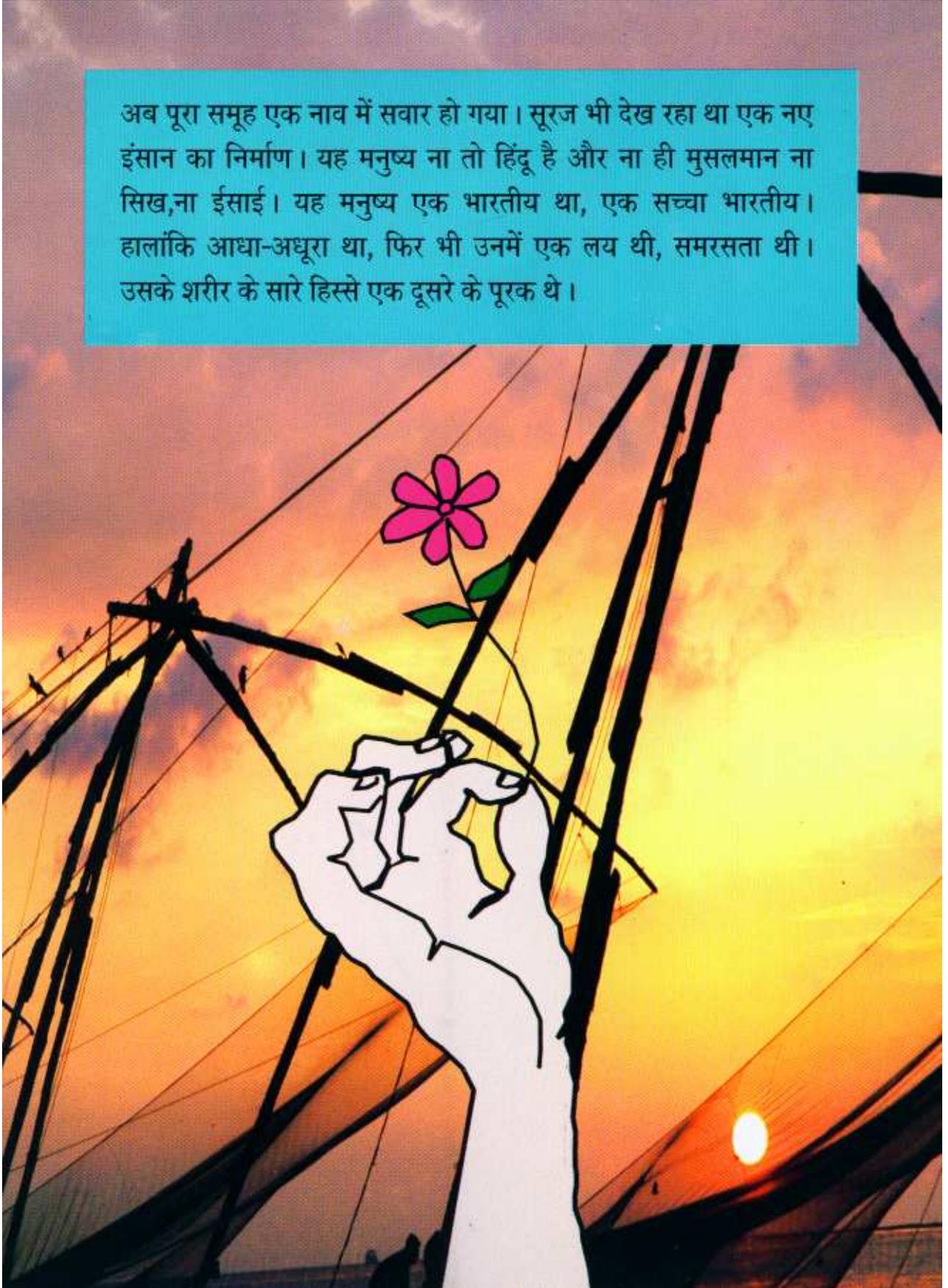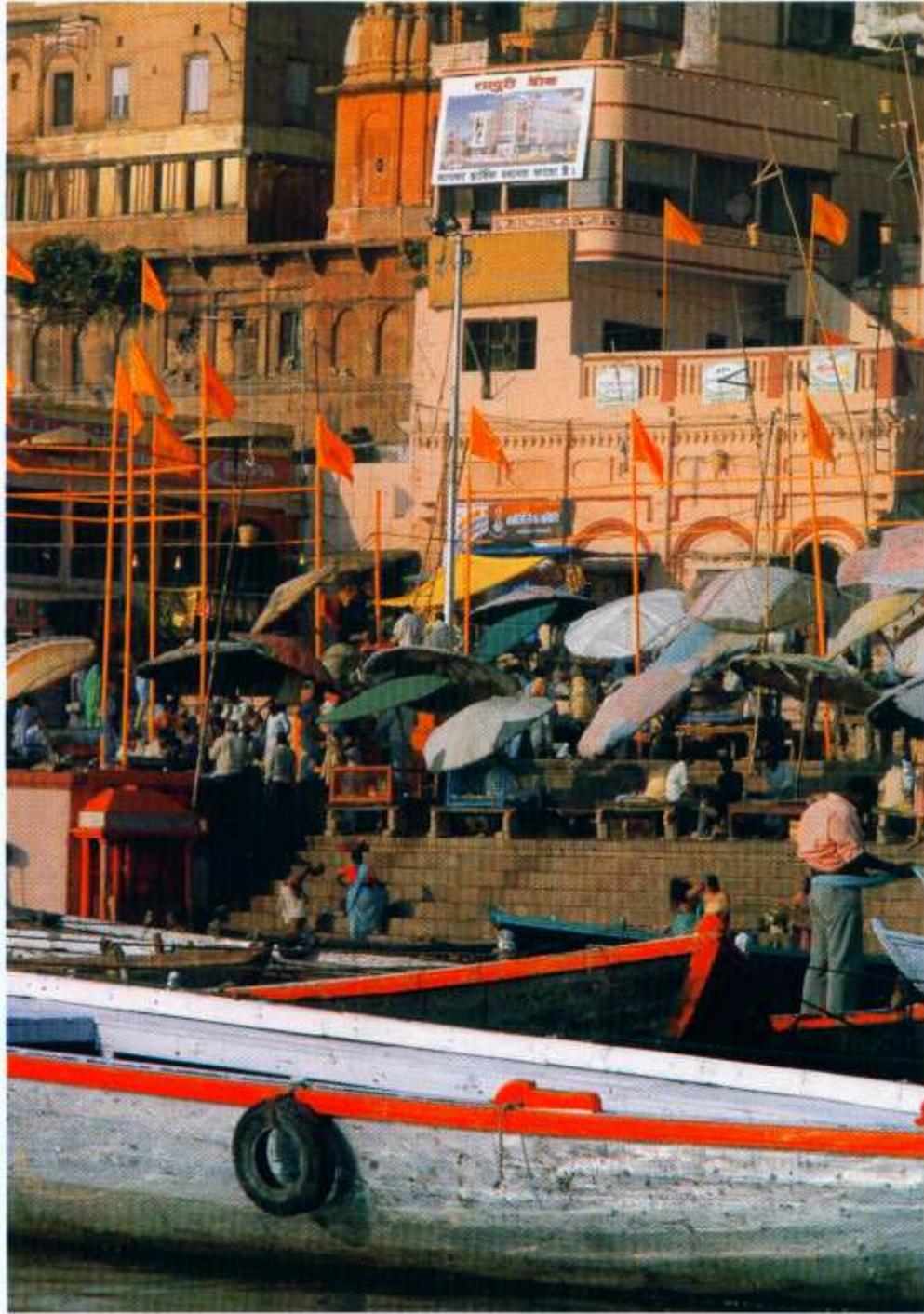
जब नाव बनारस पहुंची तो शरीर के अंगों ने एक दूसरे को बधाई दी। वे भाव विभोर थे कि उन्हें बनारस की सुबह के दर्शन हुए। उन्हें सुलगते घाट और शीतल गंगा के पौराणिक व पावन शहर में आने का मौका मिला था।
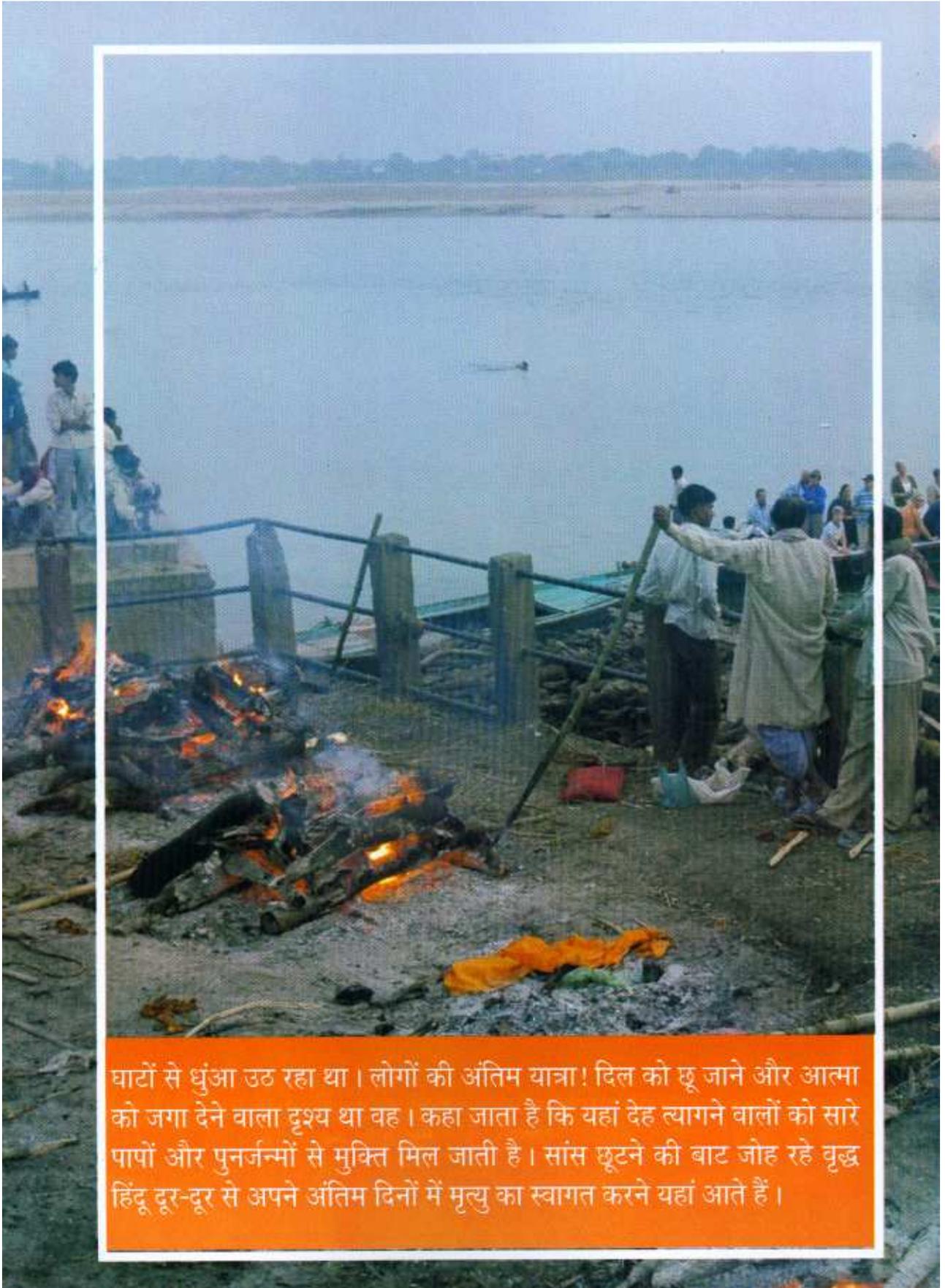
घाटों से धुंआ उठ रहा था। लोगों की अंतिम यात्रा! दिल को छू जाने और आत्मा को जगा देने वाला दृश्य था वह। कहा जाता है कि यहां देह त्यागने वालों को सारे पापों और पुनर्जन्मों से मुक्ति मिल जाती है। सांस छूटने की बाट जोह रहे वृद्ध हिंदू दूर-दूर से अपने अंतिम दिनों में मृत्यु का स्वागत करने यहां आते हैं।

नाव हौले-हौले पुराने घाटों से गुजर रही थी। लोग स्नान कर रहे थे, पवित्र गंगा-जल बोतलों में भर रहे थे, डुबकियां लगा कर प्रार्थना कर रहे थे। तभी एक जोर की चीख सुनाई दी।
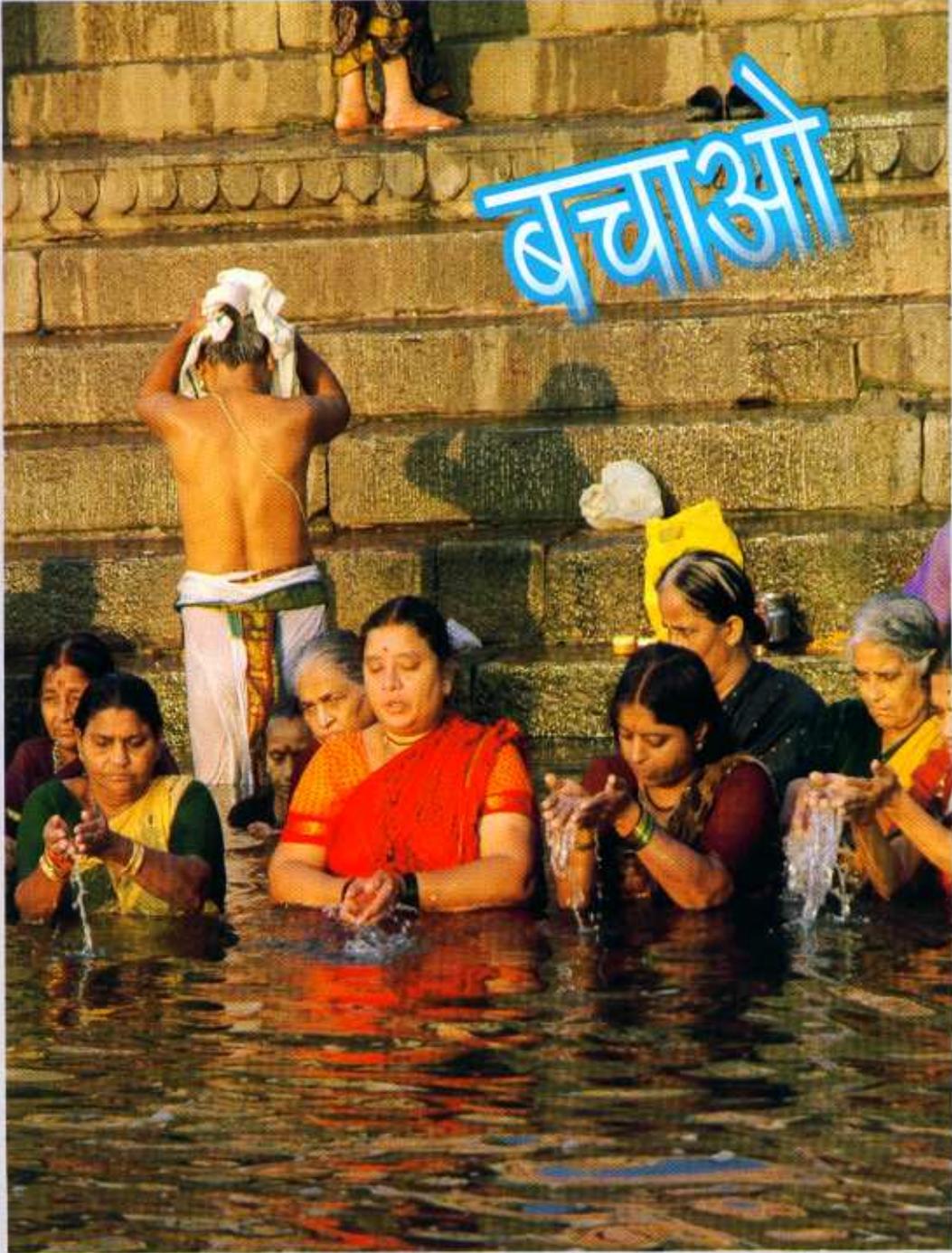
दोनों आंखों, हाथों और पैरों ने मुड़ कर देखा। एक धड़ नदी में डूब रहा था। सभी उसे बचाना चाहते थे, लेकिन हाथों ने सभी को रोका, "यह तुम लोगों के बूते की बात नहीं है। यह हमारे बाएं हाथ का खेल है।" और दोनों हाथ पानी में कूद गए। चंद ही मिनटों में वे धड़ को बचा कर नाव पर ले आए। घंटे भर बाद धड़ को होश आया तो सभी उसे घेरे खड़े थे। वे उत्सुक थे उसकी आपबीती सुनने के लिए। वह अकेला कैसे था? नदी में कैसे गिर गया?

"मैं एक मंदिर के पुजारी का धड़ हूं।
वह कभी भी अपना मंदिर और भगवान को छोड़ कर तीरथ करने नहीं जाता था। लेकिन मुझे तो कण-कण में भगवान के दर्शन करने थे। इसलिए मैं अकेला ही गंगोत्री से नाव में बैठ कर निकल पड़ा। जब मैंने चारों ओर प्रकृति का भरपूर सौंदर्य देखा, बर्फीली नदियों और शिखर देखे, कोमल तितलियां और रंगबिरंगे परिंदे देखे तो सब कुछ भूल सा गया। मस्त हो कर झूमने लगा, गाने लगा—
ईश्वर अल्लाह तेरो नाम, सबको सम्मति दे भगवान! और तभी मेरी नाव पलट गई और मैं बहता-बहता यहां आ गया।"
धड़ ने अपनी कहानी सुनाई।

अब नाव आगे बढ़ रही थी— कोलकाता की ओर। अलबत्ता नया मनुष्य अभी भी अधूरा था, लेकिन वह कुछ नए प्रयोग करने पर आमदा था। रास्ते में उन सब ने तरह-तरह के इंसान बना कर खूब मजे किए। सोचा यदि दोनों आंखें छाती पर होतीं? मान लो पैरों को कंधे पर बैठा दिया जाए? हाथों ने भी अपना स्थान छोड़ दिया तो? उनकी कल्पनाएं कुलांचें भर रही थीं।
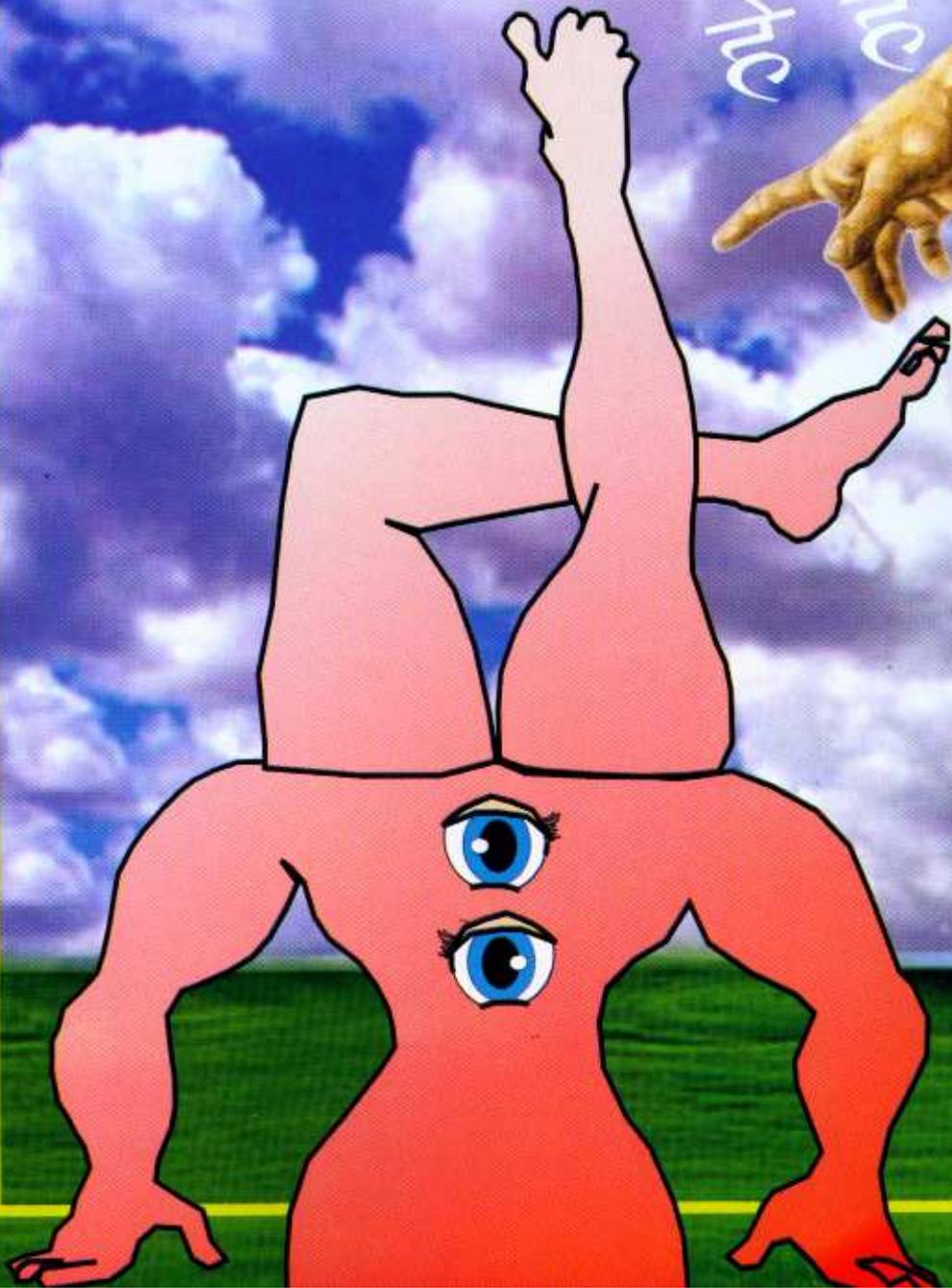
नाव कोलकाता में दाखिल हो गई थी। अब वह बहुत विशाल हावड़ा ब्रिज के नीचे थी। इसका निर्माण सन 1943 में हुआ था। घाटों पर इतनी भीड़! कितने सारे मालवाहक जहाज!! पुल के ऊपर लदा हुआ सा घना ट्राफिक!!! यह सब देख कर उनकी हंसी-ठिठोली कहीं गायब हो गई।
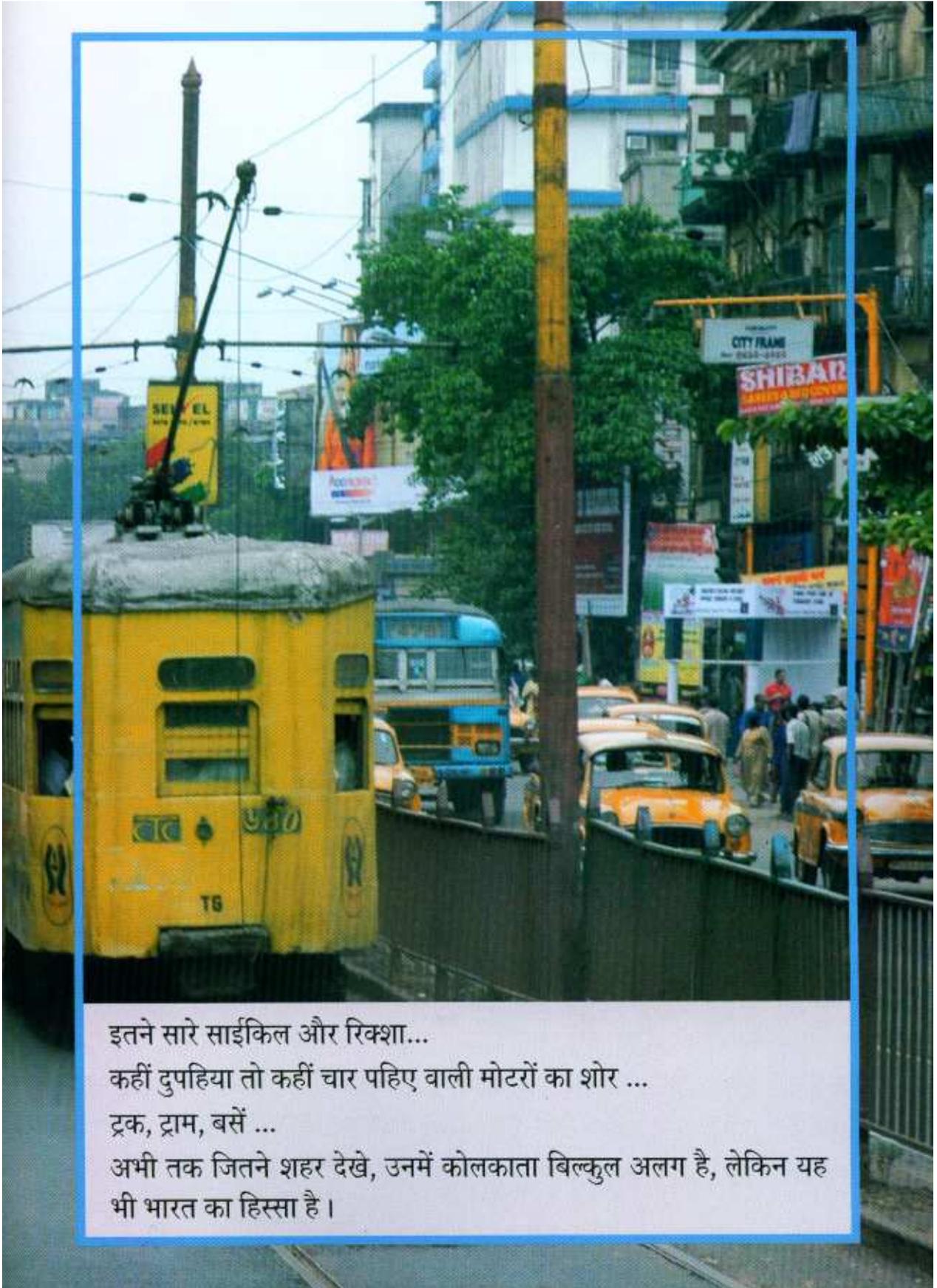
इतने सारे साईकिल और रिक्शा...

कहीं दुपहिया तो कहीं चार पहिए वाली मोटरों का शोर ...

ट्रक, ट्राम, बसें ...

अभी तक जितने शहर देखे, उनमें कोलकाता बिल्कुल अलग है, लेकिन यह भी भारत का हिस्सा है।
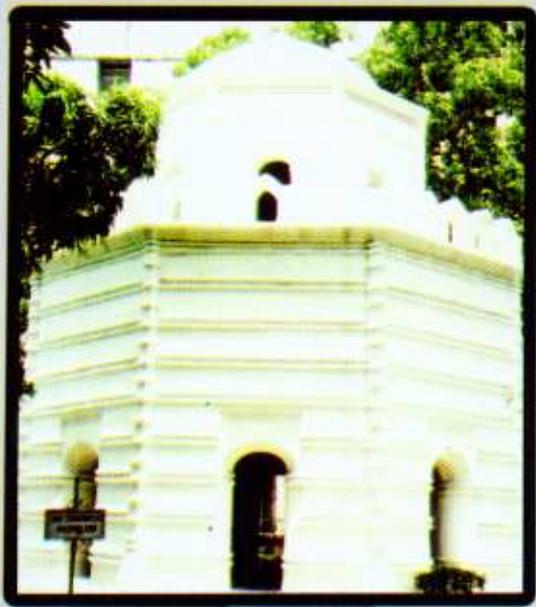
घनी आबादी वाले कोलकाता शहर में कई अनोखी इमारते हैं। जैसे सरकारी कोठी, विक्टोरिया मेमोरियल (यह उसी मकराना संगमरमर का बना है जिसका आगरा में ताजमहल), सन 1787 में निर्मित सेंट जॉन चर्च। चर्च के परिसर में कई खूबसूरत इमारतें हैं। यहीं है आठ कोणों वाली जॉन शरलाक की समाधि। इसी अंग्रेज व्यापारी ने कोलकाता महानगर को बसाया था।

इसी शहर में मदर टेरेसा ने गरीबों व निराश्रितों की सेवा की। यहीं से गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने बंगाल की संस्कृति को समृद्ध कर दुनिया के सामने पेश किया। इसी सामाजिक धरोहर से प्रेरणा लेकर सत्यजीत रे दुनिया के महान फिल्मकारों में से एक बने। यह वह शहर है जहां सुभाषचंद्र बोस ने ताकतवर अंग्रेज साम्राज्य को चुनौती दी थी।

कोई हावड़ा तक आए और मणिपुर की लोकताक झील तक ना जाए, ऐसा कैसे हो सकता है? लेकिन वहां पहुंचे कैसे? हवाई जहाज से जाएं तब भी मणिपुर की राजधानी इंफाल 595 किलोमीटर है। अलग-अलग शरीर के अंगों के दल को देख कर कोलकाता के जादूगर भी चकरा गए। इस आश्चर्य को देख कर एक जादूगर सरकार उनकी मदद करने को तैयार हो गए। उन्होंने सभी अंगों को एक साथ खड़े हो कर आंखें बंद करने को कहा।
छूमंतर!
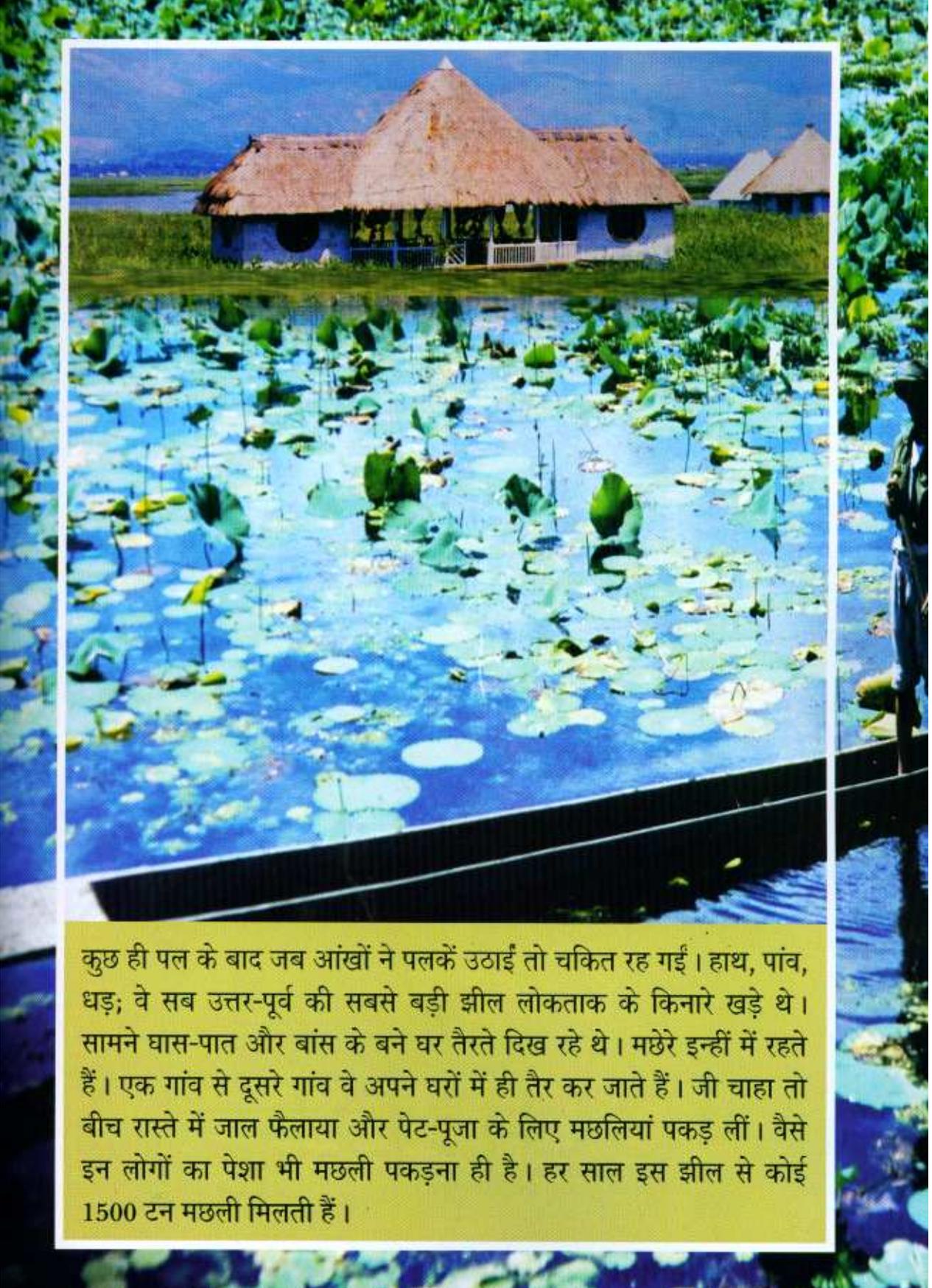
कुछ ही पल के बाद जब आंखों ने पलकें उठाईं तो चकित रह गईं। हाथ, पांव, धड़; वे सब उत्तर-पूर्व की सबसे बड़ी झील लोकताक के किनारे खड़े थे। सामने घास-पात और बांस के बने घर तैरते दिख रहे थे। मछेरे इन्हीं में रहते हैं। एक गांव से दूसरे गांव वे अपने घरों में ही तैर कर जाते हैं। जी चाहा तो बीच रास्ते में जाल फैलाया और पेट-पूजा के लिए मछलियां पकड़ लीं। वैसे इन लोगों का पेशा भी मछली पकड़ना ही है। हर साल इस झील से कोई 1500 टन मछली मिलती हैं।

'सात बहनें' कहलाने वाले राज्यों की परिक्रमा करते हुए इस टोली को एक ट्रक मिला जो मुंबई जा रहा था। ये सभी ट्रक पर सवार हो गए। ट्रक में तांबे की बनी 30 फुट ऊंची बुद्ध की प्रतिमा भी थी। वे सब प्रतिमा की गोद में बैठ कर नए मनुष्य के बारे में विचार करने लगे। अब तक उनमें हाथ, पैर, आंख और धड़ शामिल थे। जरूरत थी तो बस एक अदद सिर की - प्रेम और करुणा से भरा हुआ एक सिर! तभी एक चमत्कार हुआ, बुद्ध की विशाल प्रतिमा की करुणामयी आंखों से आंसू की एक बड़ी बूंद ढलकी। बूंद को देख कर वे सब हक्के-बक्के रह गए।
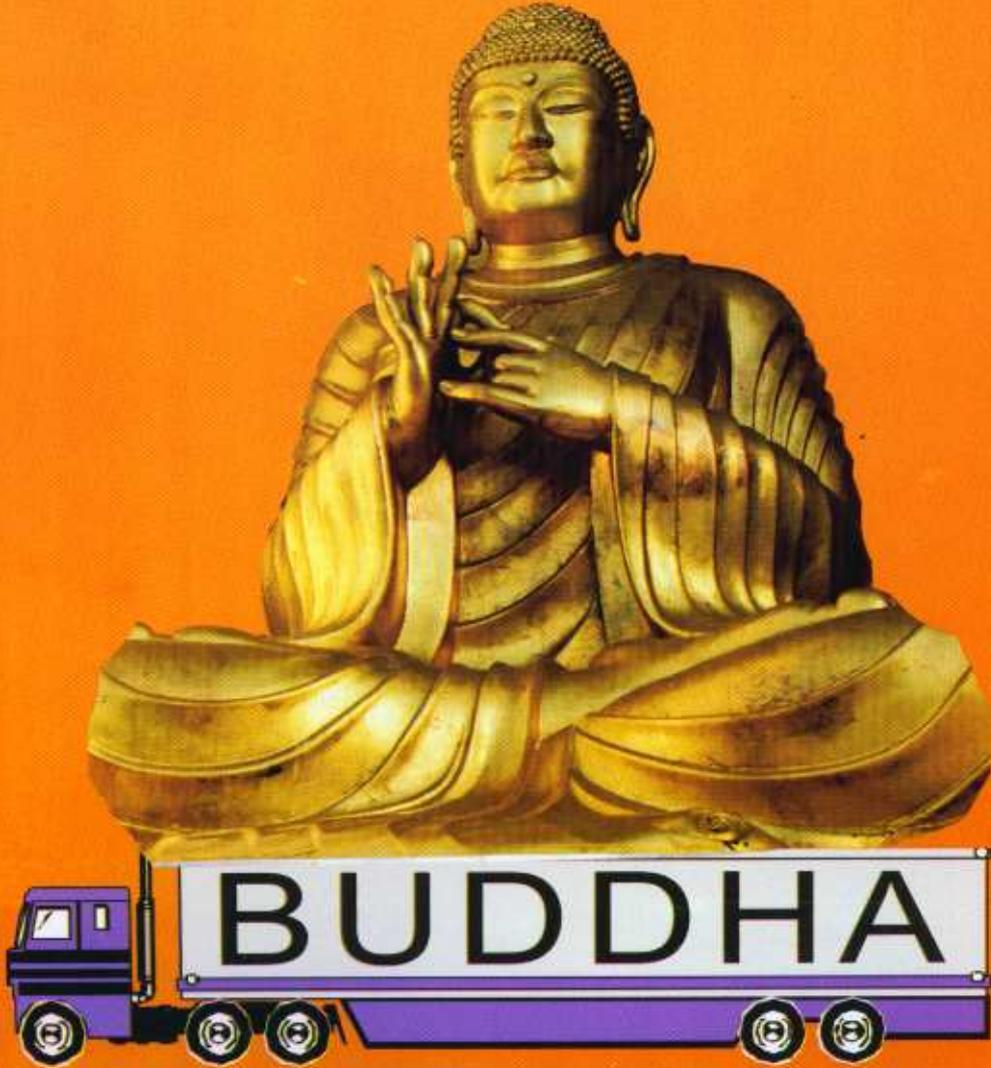
हकीकत में वह कोई आंसू की बूंद नहीं थी, वह तो था एक सिर, मनुष्य का सिर। इसी की तो तलाश थी उन सब को! सभी यह जानने को बेचैन थे कि सिर इस प्रतिमा से कैसे आया? कहां से आया? किसका था?

"मैं एक योगी का सिर हूं, जिसे लोग शिल्पकार के रूप में जानते हैं। जब मैंने अपनी बनाई हुई मूर्ति के साथ गौराई बीच, मुंबई जाना चाहा तो मेरे शरीर के अंगों ने हड़ताल कर दी। सो मुझे अकेले ही निकलना पड़ा। और यात्रा करने का इससे बेहतर तरीका और क्या हो सकता था कि भगवान तुममें हों और तुम भगवान में!"

बुद्ध की करुणामयी नजरों के तले एक महामानव का निर्माण हुआ। वह अली नाम का मुसलमान नहीं था। वह मुत्थू नामक हिंदू भी नहीं था। वह ना तो हैनरी के नाम वाला ईसाई था और ना ही जस्सी नाम का नामधारी सिख। वह सिर्फ एक इंसान था। उसे देख कर बुद्ध 2500 साल बाद पहली बार मुस्कुराए।
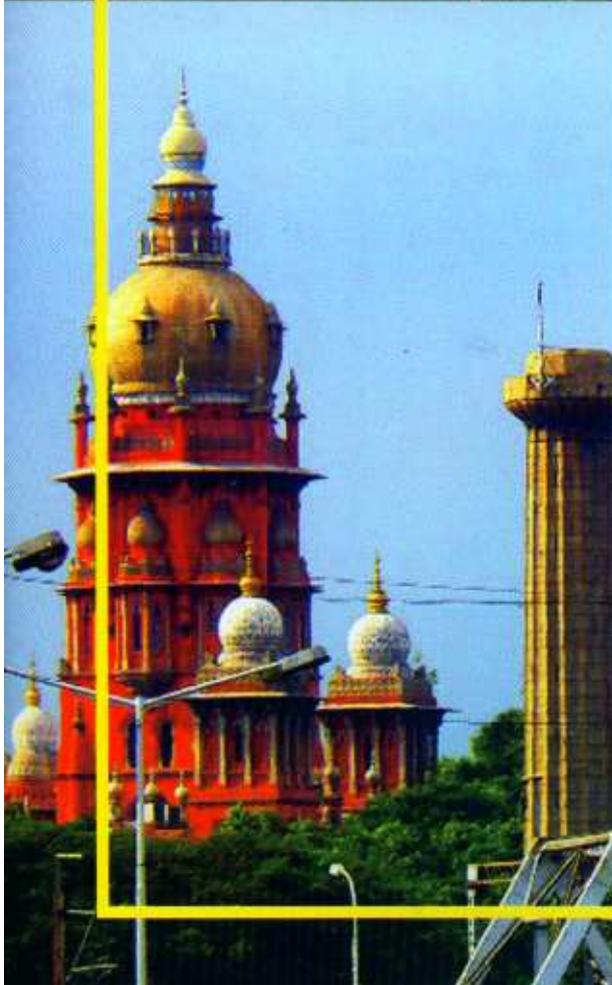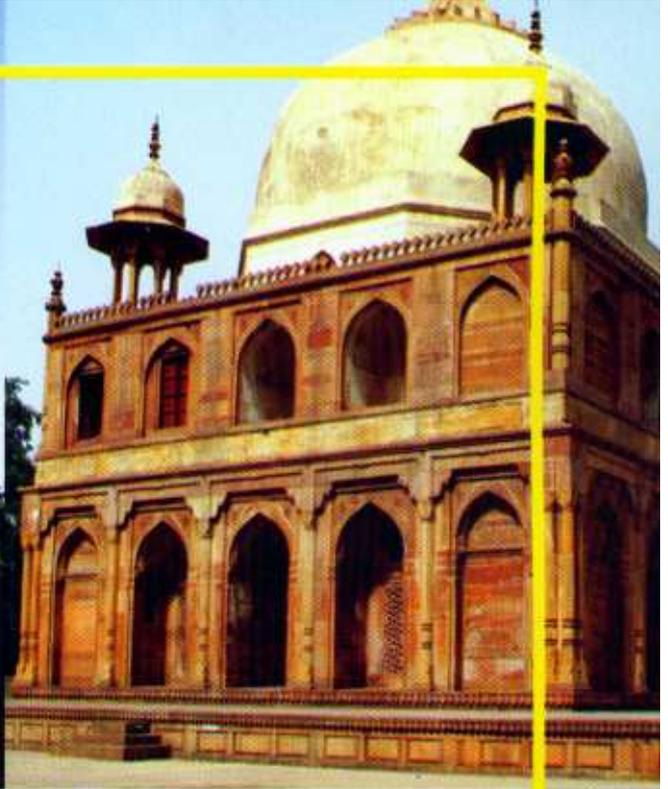
प्रतिमा के अनावरण में अभी बहुत सा समय बकाया था। सो, इस नए मनुष्य ने तय किया कि क्यों ना चेन्नै भी देख लिया जाए। उसने अपने शरीर के सभी हिस्सों से सलाह की। वे सभी राजी हो गए। जैसे ही ट्रक चेन्नै पहुंचा, सेंट मेरी चर्च के सामने यह इंसान ट्रक से कूद पड़ा। यह चर्च पुरानी अंग्रेजी इमारतों में से एक है। यहां से वे गए राष्ट्रीय कला संग्रहालय देखने। यह ब्रिटिश स्थापत्य कला का बेजोड़ नमूना है। पिंक हाई कोर्ट भी देखा। अपने प्याज जैसे गुंबद और बड़े-बड़े गुलाबी मीनारों के कारण यह किसी जादूगर के तिलस्मी महल की तरह दिखता है।

कोई चेन्नै आए और समुद्र तट ना देखने जाए! ऐसा हो ही नहीं सकता है!! मरीना बीच पर मछेरों के रंगबिरंगे कपड़े, मछली पकड़ने के जाल, तरह-तरह की खाने-पीने की सामग्री बेचते ठेले! यह कोई पोस्टकार्ड पर छपी निर्जीव छवि नहीं है, धड़कता हुआ जीवन है।
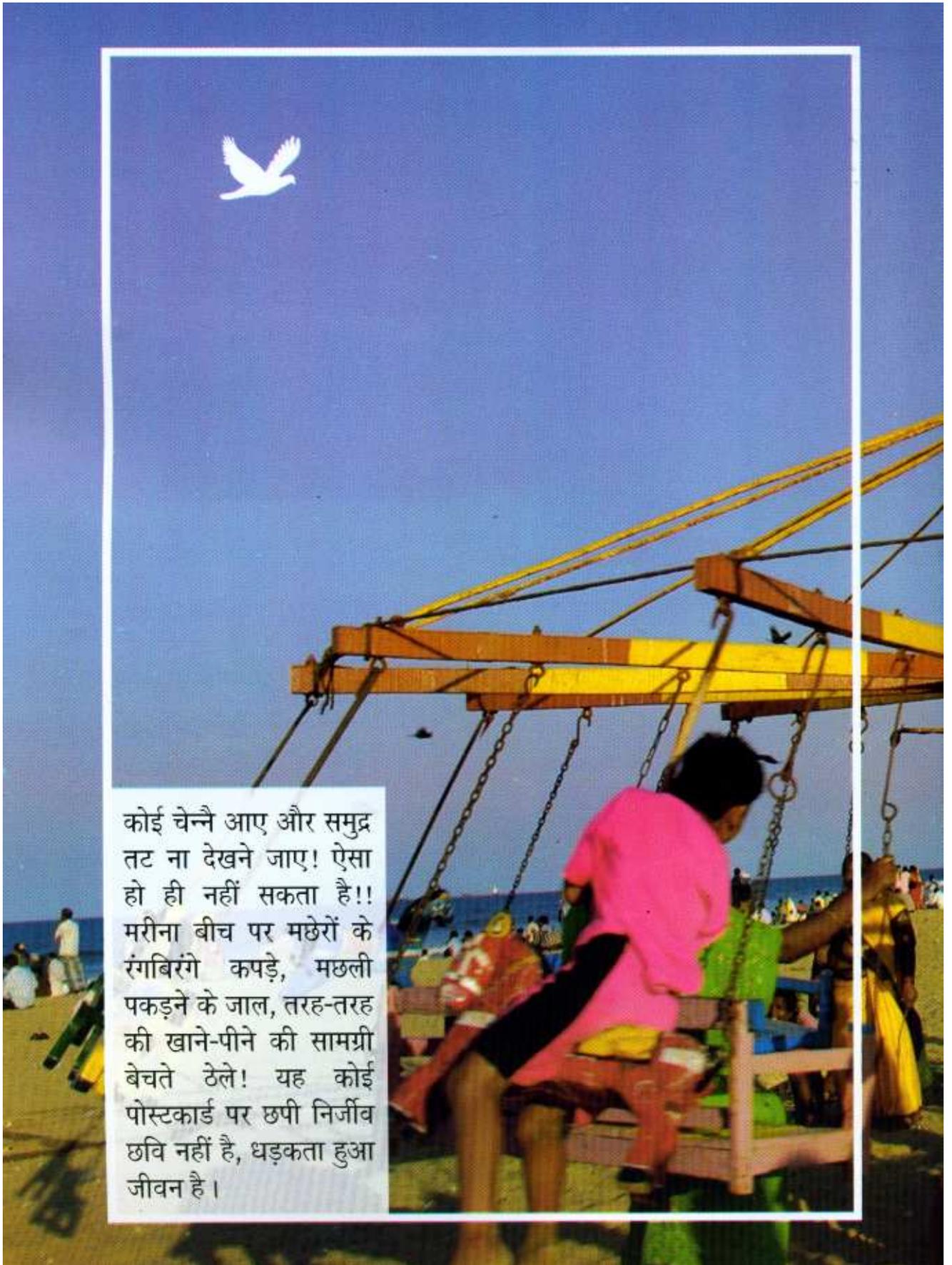
अब वे आखिरी मंजिल की ओर चलने की तैयारी करने लगे — मुंबई का गोराई समुद्र तट। यहां पर भगवान बुद्ध की विशाल प्रतिमा की स्थापना होनी थी।

वही संपूर्ण मानव ---

नया मानव----

महामानव---

चेन्नै के रंग देखने के बाद मानव ट्रेन पर सवार हो कर मुंबई की ओर चल दिया। मौसम सुहावना था। रास्ते के दृश्यों ने सफर को सुहाना बना दिया था। सब कुछ मोहक था। सब कुछ प्यारा लग रहा था। क्योंकि उसकी आत्मा प्यारी थी।
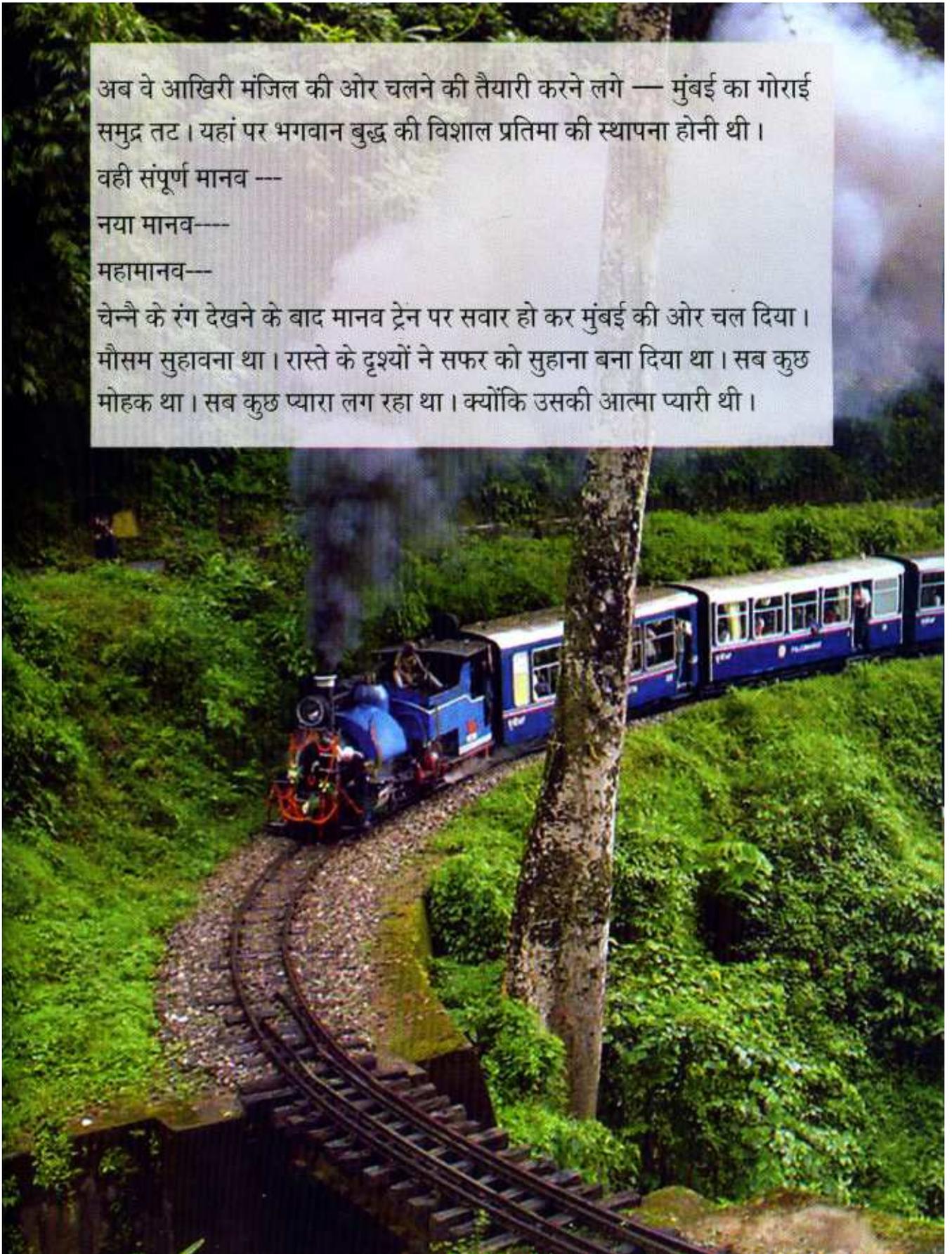
वह नया मनुष्य ठीक समय पर गोराई समुद्र तट पर पहुंच गया। बुद्ध की विशाल प्रतिमा सफेद रेशमी कपड़े से ढंकी ऊंचे चबूतरे पर रखी थी। सामने इंसानों के सिर ही सिर दिख रहे थे। इंतजार था बौद्ध भिक्षुओं का। अपने हाथों में छोटी सी ढपली बजाते हुए भिक्षु जैसे ही पहुंचे, मैदान में शांति छा गई। प्रार्थना हुई और प्रतिमा पर ढंके कपड़े को सरका दिया गया।

धीरे-धीरे भगवान बुद्ध की मुस्कान उभर रही थी। नए मनुष्य ने प्रतिमा के चेहरे को गौर से देखा— लगा कि जैसे बुद्ध स्वयं उसके भीतर मुस्कुरा रहे हैं।

पुष्पक प्रेस प्रा. लि., ओखला इण्ड. एरिया, फेस-I, नई दिल्ली द्वारा शब्द संयोजन एवं मुद्रित
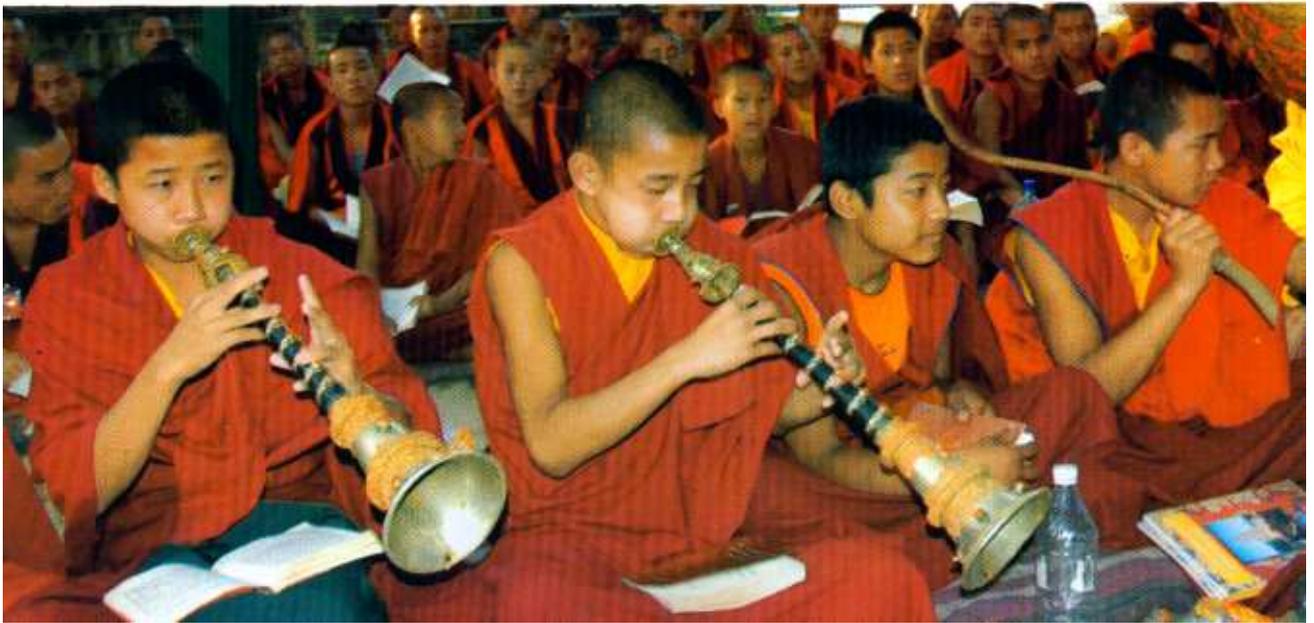
भवतु
सब्ब
मंगलम

रु. 30.00 ISBN 978-81-237-5746-9

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया